Chapter-4

चतुर्थ अध्याय

गोविन्द गिल्ला भाई का जीवन वृत्त एवं व्यक्तित्व

प्राक्कथन

तृतीय अध्याय में हमने गुजरात की हिन्दी काव्य परम्परा की लौकिक काव्य धारा की शास्त्रीय साहित्य तथा शास्त्रीय काव्य शाखा के स्वरूप तथा विकास का अध्ययन कर लिया है । गोविन्द गिल्लाभाई का सम्बन्ध मूलत: शास्त्रीय साहित्य तथा शास्त्रीय काव्य धाराओं के साथ विशेष रूप से होने के कारण अब गोविन्द गिल्ला भाई के कृतित्व आदि का अध्ययन प्रारंभ करना युक्तियुक्त प्रतीत होता है । वास्तव में अब तक के तीनों अध्याय गोविन्द गिल्ला भाई के अध्ययन की क्रमश: राष्ट्रीय, ऐतिहासिक एवं साहित्यिक भूमिका ही प्रस्तुत करते हैं । अहिन्दी भाषी प्रदेशों की हिन्दी काव्य परम्परा की भूमिका पर गोविन्द गिल्लाभाई का अध्ययन उसके राष्ट्रीय मूल्य का द्योतक है, जबकि गुजरात की हिन्दी काव्य परंपरा एवं उसमें शुद्ध लौकिक साहित्य धारा गोविन्द गिल्लाभाई के कृतित्व की ऐतिहासिक तथा साहित्यिक भूमिका प्रस्तुत करती है । अत: प्रथम तीन अध्यायों के अध्ययन के पश्चात् प्रस्तुत अध्याय से गोविन्द गिल्लाभाई का अध्ययन किया जा सकता है । किसी कवि के साहित्य के अध्ययन से पूर्व उस कवि के जीवन वृत्त तथा व्यक्तित्व से परिचित हो लेना, आवश्यक ही नहीं, वरन् आजकल तो अनिवार्य माना जाता है, क्योंकि कवि के जीवन वृत्त तथा व्यक्तित्व के परिचय के आधार पर उसके साहित्य को न केवल अच्छी तरह समझा जा सकता है, वरन् उसकी व्याख्या करने में भी वह सहायक सिद्ध हो सकता है । शुद्ध साहित्यिक समीक्षा के लिए कवि की अपेक्षा काव्य का ही साहित्यिक अध्ययन विशेष रूप से अपेक्षित होता है, परंतु जब किसी कवि का

विशेष अध्ययन किया जाता है तब उस कवि के जीवन वृत्त तथा व्यक्तित्व का अध्ययन अनिवार्य हो जाता है। अत: गोविन्द गिल्ला भाई के साहित्य तथा उनके कृतित्व का अध्ययन करने से पूर्व उनके जीवन वृत्त तथा व्यक्तित्व का अध्ययन प्रस्तुत अध्याय में किया जा सकता है।

प्रस्तुत अध्याय का अध्ययन क्रम निम्नलिखित रहेगा -

१- सम-सामयिक एवं प्रादेशिक भूमिका
२- अध्ययन की आधार भूत सामग्री
३- जीवन-वृत्त
४- व्यक्तित्व
५- उपसंहार

१। सम सामयिक एवं प्रादेशिक भूमिका

गोविन्द गिल्लाभाई का जन्म सं० १६०५ में भावनगर राज्य के अन्तर्गत सिहोर नामक स्थान पर हुआ था[१] तथा मृत्यु भी सं० १६८१ में उसी स्थान पर हुई थी[२]। अत: गोविन्द गिल्लाभाई के जीवन वृत्त आदि का परिचय प्राप्त करने से पूर्व उनके स्थान तथा जीवन काल का सामान्य परिचय प्राप्त कर लेना आवश्यक प्रतीत होता है।

भावनगर के शासक गोहिल राजपूत कहलाते हैं, जो सन् १२४० में खेड़गढ़ मारवाड़ से राठौर राजपूतों द्वारा निष्कासित हो कर सौराष्ट्र में चले आये थे तथा फिर यही बस गये[३]। उस समय गोहिल राजपूतों का राजा सेजक जी नामक

१- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात - गोविन्द गिल्ला भाई, पृ० १६।
२- गोविन्द गिल्ला भाई के पौत्र द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।
३- History of Kathiawad - Capt. H. Wilberforce Bell, p.71.

था जिसने सौराष्ट्र में तत्कालीन जूनागढ़ के राजा रा खेंगार जी तृतीय के साथ अपनी पुत्री की शादी कर दी।[१] वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हो जाने के कारण जूनागढ़ के राजा ने फिर सेजक जी की हर प्रकार से सहायता की तथा शाहपुर नामक स्थान (आधुनिक पंचाल जिले में) भी स्वतंत्र रूप से बसने के लिए दिया।[२] सेजक जी के पुत्र ने शाहपुर छोड़ कर अपनी राजधानी रानपुर को बनाया तथा आगे चल कर वीसोजी (१५७५-१६०० ई०) ने सिहोर को अपनी राजधानी बनाया।[३] वीसोजी गोहिल के पूर्व सिहोर कन्धोजी गोहिल के अधिकार में था, परन्तु १६ वीं शताब्दी में वीसोजी ने उसे अपने अधिकार में कर लिया तथा वहां पर एक किला बनवा कर उसे अपनी राजधानी बनाया।[४] वीसोजी के समय से आधुनिक भावनगर के शासक भावसिंह जी के समय तक सिहोर सौराष्ट्र की एक प्रमुख राजधानी रही है तथा ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से आज भी सिहोर सौराष्ट्र का महत्वपूर्ण नगर है। सन् १७२३ में सिहोर के शासक महाराज भावसिंह जी ने भावनगर की स्थापना की तथा उसे ही अपनी राजधानी बनाया।[५] सिहोर से राजधानी भावनगर ले जाने के मूल में पीला जी गायकवाड़ का सन् १७२२ का आक्रमण माना जाता है।[६] सन् १८०२ के आसपास अंग्रेज गुजरात में घुस आये थे तथा सन् १८०७ के आसपास मराठों की सहायता से अंग्रेजों ने सौराष्ट्र पर भी अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया।[७] अंग्रेजों के प्रभुत्व से भावनगर भी मुक्त न रह सका तथा तभी से स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय गणतन्त्र में उसके विलय होने के समय तक वह अंग्रेजों द्वारा संरक्षित राज्य बना रहा।

१- History of Kathiawad By Capt. H.Wilberforce Bell, p. 71.

२- Ibid, p. 71.

३- Ibid, p. 71.

४- Ibid, p. 113.

५- Ibid, p. 124.

६- Ibid, p. 124.

७- Ibid, p. 176.

आशय यह कि १६वीं शताब्दी से १८ वीं शताब्दी के प्रथम चरण तक सिहोर सौराष्ट्र की एक प्रमुख राजधानी होने के कारण अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण नगरी रही है। गोविन्द गिल्लाभाई के जन्म से पूर्व ही, यद्यपि सिहोर का राजधानी होने के कारण जो महत्व था समाप्त हो चुका था, परन्तु उसकी ऐतिहासिक महत्ता अब भी थी तथा अब भी सिहोर के किले से राजपरिवार का सम्बन्ध बना हुआ था। सांस्कृतिक दृष्टि से सिहोर गोहिल राजपूतों के अधिकार में आने से पूर्व भी प्रसिद्ध था। पहले इसका नाम सिंहपुर था जिसका प्रथम उल्लेख सन् ६४१ में मिलता है।[1] यहां के किसी ब्राह्मण को वल्लभी राज्य के महाराज ध्रुव सेन द्वितीय के पुत्र धरसेन चतुर्थ ने सन् ६४१ में भूमि दान की थी[2]। सिहोर में हिन्दी लेखकों की परंपरा भी गोविन्द गिल्लाभाई के समय से बहुत पूर्व से मिलने लगती है। सन् १७६४ में सिहोर में हर्षदास नामक एक वैश्य वैष्णव कवि हुए हैं जिन्होंने हिन्दी में भक्त मुकुट मणि, काशी प्रकाश, द्वारका प्रवास, महोत्सव ग्रंथ, वरदायक स्तोत्र आदि ग्रंथ लिखे हैं तथा अनेक स्फुट पद भी हिन्दी में लिखे हैं। सन् १८२६-१८६४ में सिहोर में एक दूसरे हिन्दी के कवि गोपाल जी हुए हैं जिन्होंने 'चंडी विलास' नाम का एक सुन्दर ग्रंथ हिन्दी में लिखा है तथा शास्त्रीय शैली में अनेक स्फुट कवित्त सवैया हिन्दी में लिखे हैं। इनके अतिरिक्त गोविन्द गिल्लाभाई से पूर्व ही मंगलदास तथा वीरचंद नाम के दो और भी कवि हिन्दी के सिहोर में हुए हैं जिन्होंने क्रमश: शिव विलास तथा सम्पूर्ण भारत नामक रचनाएं हिन्दी में की हैं तथा अनेक स्फुट छंद हिन्दी में लिखे हैं। इन कवियों का उल्लेख गोविन्द गिल्लाभाई के कवि चरित्र सम्बन्धी कागजों में मिलता है जिससे स्पष्ट है कि ये कवि गोविन्द गिल्लाभाई से पूर्व ही हुए होंगे। गोविन्द गिल्लाभाई ने जिन जैन साधु श्री पानाचंद जी से पिंगल तथा काव्यशास्त्र का सामान्य ज्ञान प्राप्त किया था वे भी हिन्दी के मर्मज्ञ विद्वान् तथा काव्यप्रेमी थे[3]।

१- History of Kathiawad By-Capt. H. Wilberforce Bell, p.39.

२- Ibid, p. 39.

३- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात - गोविन्द गिल्लाभाई, पृ० २० ।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि सिहोर प्राचीन काल से ही इतिहास प्रसिद्ध नगर रहा है तथा १८ वीं शताब्दी से ही यहां हिन्दी की काव्य परंपरा मिलती है। अब भी सिहोर में हिन्दी के अनेक हस्तलिखित ग्रंथ उपलब्ध होते हैं जिससे यही सिद्ध होता है कि गोविन्द गिल्लाभाई के समय से बहुत पूर्व ही सिहोर में हिन्दी की काव्य परंपरा स्थापित हो चुकी थी। गोविन्द गिल्लाभाई ने अन्यत्र लिखा है कि उनके बाल्यकाल में अनेक हिन्दी के कवि तथा विद्वान् सिहोर के किले में आया करते थे तथा उन्हीं की संगति से उन्हें कविता पर विशेष रुचि उत्पन्न हुई थी जिसने उन्हें हिन्दी का कवि बना दिया[१]। आशय यह कि सिहोर की सांस्कृतिक परंपरा ने गोविन्द गिल्लाभाई के कृतित्व के निर्माण तथा विकास में महत्वपूर्ण योग दिया है।

गोविन्द गिल्लाभाई की सम सामयिक परिस्थितियों पर विचार करते ही हिन्दी तथा गुजराती साहित्य के आधुनिक कालों के प्रारंभिक दिनों का चित्र हमारे सामने आता है। क्योंकि सं० १६०० से हिन्दी के आधुनिक काल का प्रारंभ विद्वानों ने माना है[२] उसी प्रकार गुजराती के आधुनिक काल का प्रारंभ भी विद्वानों ने इसी के आसपास माना है[३]। आशय यह कि गोविन्द गिल्लाभाई के जन्म काल (सं० १६०५) से कुछ पूर्व ही गुजराती और हिन्दी के आधुनिक कालों का प्रारंभ हो चुका था। उक्त दोनों साहित्यों के आधुनिक काल के विषय में दोनों भाषाओं में अनेक विद्वानों द्वारा प्रचुर प्रामाणिक साहित्य लिखा जा चुका है अत: उसके विषय में विस्तार से यहां कुछ न कह कर केवल उन्हीं तथ्यों की ओर संकेत किया जायेगा जिनका सम्बन्ध गोविन्द गिल्लाभाई के व्यक्तित्व तथा कृतित्व के साथ है।

१- (कवि गोविन्द गिल्लाभाई ना जीवन चरित्र नी) स्मरण पोथी अथवा डायरी बुक, पृ० ३।
बड़ौदा विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग का हस्तलिखित ग्रंथ संग्रह ग्रंथ सं० १६६।
२- हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ० ३८१।
३- गुजरात एंड इट्स लिटरेचर - के० एम० मुंशी, पृ० २२६।

रीतिकाल के समाप्त होते होते अंग्रेजी राज्य देश में पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित हो गया था[१]। गुजरात में अंग्रेजी राज्य की स्थापना सन् १८००-१८१८ के बीच हो गयी थी[२], परन्तु उस समय गुजरात के सूरत, भरूच, पंचमहल, खेरा तथा अहमदाबाद के पांच जिले ही बंबई सरकार द्वारा सीधे शासित थे, शेष सारा आधुनिक गुजरात देशी शासकों द्वारा ही शासित थे[३]। परन्तु अहमदाबाद का प्रभाव सारे सौराष्ट्र पर छाने लगा था[४]।

परिणाम स्वरूप नवीन युग का प्रभाव गुजरात के माध्यम से सौराष्ट्र तक पहुंचने लगा था। गुजराती साहित्य के आधुनिक काल को विद्वानों ने तीन काल खंडों में विभक्त किया है[५]: प्रथम सन् १८५२- १८८५, द्वितीय १८८५-१९१४, तृतीय १९१४-१९३४ जो कुछ वर्षों के आगे पीछे से आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा[६] मान्य आधुनिक काल के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय उत्थान के समान ही है। परन्तु इन दोनों साहित्यों के विकास में थोड़ा अन्तर भी है। उदाहरणार्थ गुजराती साहित्य के आधुनिक काल के प्रथम उत्थान में तथा हिन्दी के आधुनिक काल के द्वितीय उत्थान द्विवेदी युग में सुधारवादिता प्रमुख रूप से मिलती है। इसीलिए इसे हिन्दीके प्रथम उत्थान के नाम भारतेन्दु युग के समान नर्मद युग कहते हुए भी अनेक विद्वानों ने इसे 'सुधारा नो युग' कहा है[७]। भारत में आधुनिक युग में सुधारवादिता का आन्दोलन सर्व प्रथम बंगाल में राजा राम मोहन राय द्वारा प्रारम्भ हुआ था, जिसने अन्य प्रान्तों की अपेक्षा गुजरात को कुछ समय पहले ही प्रभावित करना प्रारम्भ कर दिया था। परिणाम स्वरूप राजा राम मोहन राय के समय में ही गुजरात में रणछोड़

१- हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० ३९२।

२- समाज सुधारा नुं रेखा-दर्शन - नवलराम जगन्नाथ त्रिवेदी, पृ० १२।

३- Gujarat and its Literature - K.M.Munshi, p. 230.

४- Ibid, p.230.

५- Ibid, p.229.

६- तुलनीय हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० २७,४६६,५०९।

७- गुजराती साहित्य की रूपरेखा - विजयराम कल्याणराम वैद्य, पृ० ३१५।

भाई गिरधर भाई, दर्गाराम महेता, तुलजाराम सुखराम, महिपत राम रूपराम आदि जैसे समाज सुधारक तथा नवीन शिक्षा के प्रचारक उत्पन्न हो चुके थे[१]। इन व्यक्तियों के कारण गुजरात में अनेक समाज सुधारक संस्थाएं स्थापित हुई तथा नवीन शिक्षा का प्रचार तो हुआ, ही, साथ ही साहित्य के माध्यम से नवीन जीवन दृष्टि का व्यापक प्रचार किया गया। गुजरात की अपेक्षा सौराष्ट्र में सुधारवाद का प्रचार बहुत मंद गति से हो रहा था[२], फिर भी कीकाणी (सन् १८२२ - १८८४) और पंडित भगवान लाल (१८३४- १८८८) आदि व्यक्तियों के प्रयासों से सौराष्ट्र नवीन चेतना से अछूता नहीं रहा था[३]। गोविन्द गिल्ला भाई स्वयं सुधारवादी व्यक्ति थे। इस काल की दूसरी सामाजिक प्रवृत्ति, नवीन शिक्षा प्रेम तथा शिक्षा के प्रचार का प्रयास भी गोविन्द गिल्लाभाई के कृतित्व में परिलक्षित होता है।

सन् १८८५-१९१४ तक का समय गुजराती साहित्य का पंडित युग कहलाता है[४], गोविन्द गिल्ला भाई की प्रौढ़ावस्था का प्रारम्भिक समय गुजरात में बम्बई विश्व विद्यालय के प्रभाव के कारण बौद्धिकता के साथ साथ संस्कृत भाषा और साहित्य के प्रचार का समय था[५]। गोविन्द गिल्ला भाई की शास्त्र प्रियता, संस्कृत प्रेम, ऐतिहासिक तथा तुलनात्मक साहित्यिक दृष्टि के साथ साथ वैज्ञानिक अध्ययन तथा शोध जिज्ञासा आदि गुजरात की तत्कालीन अवस्था को देखते हुए अस्वाभाविक नहीं लगती।

गुजराती साहित्य के आधुनिक काल के उक्त दोनों काल खंडों (१८५२-१८८५, १८८५-१९१४) के समानान्तर हिन्दी के आधुनिक काल के भारतेन्दु युग और द्विवेदी युग आते हैं। भारतेन्दु युग में ब्रजभाषा की परम्परा के बने रहने के कारण रीतिकाल

१- Gujarat and its Literature - K.M.Munshi, p. 233.

२- समाज सुधारा नु रेखा-दर्शन - नवलराम जगन्नाथ त्रिवेदी, पृ० ११८।

३- वही, पृ० ११९, १२०।

४- गुजराती साहित्य की रूपरेखा - विजयराम कल्याणराम वैद्य, पृ० ३१५।

५- Gujarat and its Literature - K.M.Munshi, p. 252-54.

पूर्णत: समाप्त नहीं हो गया था । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भारतेन्दु युग के कवियों को दो वर्गों में बांटते हुए एक को केवल पुरानी परिपाटी पर कविता करने वाला कवि समूह माना है जबकि दूसरे को पुरानी परिपाटी से सम्बन्ध पूर्णत: बनाये रखते हुए भी साहित्य को नवीन गति प्रदान करने वाला कवि समूह कहा है।[१] प्रथम वर्ग के कवि प्राधान्येन रीतिकाल का प्रतिनिधित्व करते हैं तो द्वितीय वर्ग के कवि सामान्येन रीतिकाल का प्रतिनिधित्व करते हैं । आशय यह कि भारतेन्दु काल में रीतिकाल एकदम समाप्त नहीं हो गया था । द्विवेदी युग में ब्रजभाषा के स्थान पर गद्य और पद्य दोनों में खड़ी बोली के प्रयोग के साथ साथ उसके परिष्कृत हो जाने के कारण, जिसका श्रेय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी को ही है,[२] ब्रजभाषा की परंपरा के साथ साथ रीतिकालीन काव्य परम्परा अत्यन्त क्षीण हो गयी थी । गोविन्द गिल्लाभाई द्विवेदी युग में साहित्य के प्रतिष्ठित कवि थे परन्तु उनकी कविता पर द्विवेदी युग का प्रभाव विशेष नहीं देखा जा सकता । अत: आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा गोविन्द गिल्लाभाई की परिगणना भारतेन्दु युग के पुरानी परिपाटी के कवि सेवक, सरदार,[३] लछिराम तथा नवनीत चतुर्वेदी आदि कवियों के साथ, युक्ति युक्त प्रतीत होती है । गोविन्द गिल्लाभाई का समग्र कवित्व तथा मूलत: अधिकांश आचार्यत्व रीतिकालीन ही है । हिन्दी में तो आचार्यत्व की प्राचीन परम्परा थी ही, गोविन्द गिल्लाभाई के समय में गुजराती में भी यह परम्परा कुछ नवीन आधुनिक विशेषताओं के साथ प्रारम्भ हो गयी थी ।[४] गोविन्द गिल्लाभाई का आचार्यत्व मूलत: तथा प्रधानत: रीतिकालीन है परन्तु उसमें कुछ नवीनताएं गुजराती के प्रभाव के कारण भी मानी जा सकती हैं । हिन्दी के तत्कालीन आचार्य कवियों जैसे हरिऔध जी आदि में भी रीतिकालीन आचार्य कवियों के विरुद्ध कुछ नवीनता दृष्टिगोचर

१- हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० ५५६ ।

२- महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग - डा० उदयभानु सिंह

३- तुलनीय : हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० ५५४-५५६ ।

४- Development of Gujarati Literature - K.M.Jhaveri, Ed.M.R. Majumdar, p. 7.

होती हैं । अत: गोविन्द गिल्लाभाई के आचार्यत्व को कुछ आधुनिक विशेषताओं के मूल में गुजराती तथा हिन्दी दोनों की तत्कालीन परिस्थितियों को कारण रूप मानना ही अधिक उपयुक्त होगा ।

२। अध्ययन की आधारभूत सामग्री

गुजरात की हिन्दी काव्य परम्परा का अध्ययन करते समय, गुजरात के अनेक ऐसे श्रेष्ठ हिन्दी कवि तथा साहित्यकार हमारे सम्मुख आये हैं, जिनका हिन्दी के इतिहास ग्रंथों में नामोल्लेख भी नहीं मिलता । परन्तु गोविन्द गिल्लाभाई, गुजरात के उन गिने चुने हिन्दी के साहित्यकारों में से हैं, जिनसे हिन्दी जगत् बहुत पहले से परिचित हैं । अपेक्षाकृत अर्वाचीन समय में उत्पन्न होने के कारण तथा अपने सम सामयिक हिन्दी के वरिष्ठ लेखकों जैसे श्री मिश्रबन्धु, श्री देवी प्रसाद मुंशी, श्री अक्षयवट मिश्र 'विप्र चंद्र' कवि, नकछेदी तिवारी, 'अजान' कवि, कविरत्न नवनीत चतुर्वेदी एवं काशी कवि मंडल, काशी कवि समाज, पटना कवि समाज, काशी नागरी प्रचारिणी सभा आदि साहित्यिक संस्थाओं के साथ निकट से सम्बन्धित होने के कारण, गोविन्द गिल्ला भाई से हिन्दी के लेखक गण भलीभांति परिचित थे । अत: समय समय पर हिन्दी के साप्ताहिक तथा मासिक पत्रों, इतिहास एवं संग्रह ग्रन्थों में इनके विषय में बहुत कुछ लिखा जा चुका है । अत: अब तक हिन्दी के विद्वानों द्वारा गोविन्द गिल्लाभाई के विषय में जो कुछ लिखा जा चुका है, वह प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन की आधारभूत सामग्री है जिसे यहां बहिरंग आधार कहा जा सकता है । प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के बहिरंग आधार से सम्बद्ध सामग्री निम्नलिखित ग्रन्थों तथा पत्रों में प्रकाशित रूप में मिलती हैं :

१- मिश्रबंधु विनोद, तृतीय भाग, — मिश्रबंधु, लखनऊ
२- हिन्दी साहित्य का इतिहास — आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, काशी
३- हिन्दी साहित्य का अतीत, द्वितीय भाग — आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र, काशी
४- साहित्य रत्नाकर — कवि कहान जी धर्मसिंह, बम्बई
५- माधुरी (मासिक पत्र) लखनऊ, सं० १९७८ श्रावण
६- सरस्वती (मासिक पत्र) प्रयाग, सन् १९२० अगस्त

७- बिहार बंधु(साप्ताहिक पत्र) बांकीपुर,सं० १६६६ भाद्रपद, ११-६-१६०६
८- गुजराती(मासिक पत्र) बम्बई, १५-१०-१६२२

इनके अतिरिक्त कुछ संग्रह ग्रंथ तथा पत्रिकाएं ऐसी हैं जिनमें गोविन्द गिल्लाभाई की कवितायें प्रकाशित हुई हैं या उनका संक्षिप्त उल्लेख मिलता है, ये निम्नलिखित हैं :

१- षट्ऋतु वर्णन	ग्वालराव,काशी
२- शिखनख	बलभद्र काशी
३- भडौवा संग्रह भाग चार, तथा भूमिका	काशी
४- महिला मृदु वाणी	
५- दोहा संग्रह	जमाल कृत अजमेर
६- सम्मतिमाला (भडौवा संग्रह की)	काशी
७- प्रवीण सागर	अहमदाबाद
८- काशी कवि समाज की समस्यापूर्ति संग्रह (चौथा भाग)	काशी
९- काशी कवि मंडल की समस्या पूर्ति संग्रह	काशी
१०- समस्या पूर्ति (मासिक पत्र)	पटना कवि समाज,पटना
११- रसिक मित्र (मासिक पत्र)	कानपुर
१२- पीयूष प्रवाह (मासिक पत्र)	
१३- काशी कवि समाज की द्वितीय वार्षिकोत्सव की रिपोर्ट	
१४- अर्वाचीन प्राचीन सोरठा संग्रह, द्वारा चतुरसिंह,की भूमिका	

उक्त सामग्री के अतिरिक्त स्वयं गोविन्द गिल्लाभाई द्वारा लिखित सामग्री भी उपलब्ध हैं,जिसे प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के अंतरंग आधार के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। यह सामग्री प्रकाशित तथा हस्तलिखित दोनों रूपों में उपलब्ध है, जिसका उल्लेख निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है:-

प्रकाशित :

१- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात

हस्तलिखित

१- गोविन्द गिल्लाभाई ना जीवन चरित्र नी स्मरण पोथी अथवा डायरी बुक ह० प्र० सं० १६६ ।

२- संक्षिप्त जीवन चरित्र १६४ (ह० प्र० सं०)
३- डायरी (दो छोटी) १७५ (,,)
४- स्फुट कागज पत्र आदि २०६(,,)

उक्त समस्त हस्तलिखित सामग्री महाराजा सयाजी राव विश्व विद्यालय, बड़ौदा के हिन्दी विभाग के हस्तलिखित ग्रंथ संग्रह में सुरक्षित है । स्वयं कवि द्वारा लिखित होने के कारण, बहिरंग आधार की सामग्री की तुलना में अंतरंग आधार की सामग्री अधिक प्रामाणिक मानी जायेगी । इसलिए प्रस्तुत अध्ययन के मूलाधार के रूप में कवि द्वारा लिखित सामग्री ही स्वीकृत की गयी है, जबकि इतर सामग्री का उपयोग आवश्यकतानुसार अतिरिक्त पुष्टि आदि के लिए किया जा सकता है ।

३ । जीवन वृत्त

३।१ जाति और वंश परिचय

गोविन्द गिल्लाभाई जाति से चौहान राजपूत थे,[१] परन्तु पूर्वजों के धंधे आदि के कारण खबास कहलाते थे[२] । हिन्दी भाषी प्रदेशों, विशेषकर राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश में खवासों का काम मुख्यत: नाई करते हैं, इसलिए खवास का अर्थ सामान्यत: वहां नाई ही होता है । परन्तु सौराष्ट्र में आजकल यह एक स्वतंत्र जाति बन गयी है, जिसमें अनेक जातियों का सम्मिश्रण हो चुका है । गोविन्द गिल्लाभाई ने लिखा

१- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात - गोविन्द गिल्लाभाई, पृ० १७ ।
२- वही, पृ० १६ ।

है कि "आजकल काठियावाड़ में खवास एक स्वतंत्र जाति बन गयी है और उनमें बहुत सी जाति का मिश्रण हो गया है, क्योंकि जिनकी साथ राजा खाते पीते हैं, उन की साथ खवासों को भी खाना पीना पड़ता है और राजा प्रथम तेरह कोमों की साथ खाने का व्यवहार रखते थे। इसलिये उनको तेर त्रांसली (तेरह खाने के पात्र) कहते थे। परन्तु अब कुछ यह नियम नहि रहा है। तथापि खवासों में जो असल राजपूत कोम है वह अपने बेटा बेटी अपनी जाति के रजपूतों में देते लेते हैं। इतना नियम यह लोको ने रखा है।"[१] सुपष्ट है कि गोविन्द गिल्लाभाई मूलत: राजपूत थे, परन्तु पूर्वजों के काम धंधों के अनुसार खवास कहे जाते थे। सौराष्ट्र के जिन राजपूतों के पास स्वयं की भुमि नहीं रहती थी, वे या तो किसी जमीदार की जमीन ठेके पर ले कर खेती करते थे या किसी राजा महाराजा के यहां हजूरी या खवासी का काम करते थे। प्रथम प्रकार के राजपूत सौराष्ट्र में कारडिया राजपूत कहलाते हैं तथा द्वितीय प्रकार के खवास।[२] गोविन्द गिल्लाभाई द्वितीय प्रकार के राजपूत थे। जैसे वल्लभ सम्प्रदाय के आचार्यों की खवासी में रह कर ब्राह्मण आदि जाति-बहिष्कृत नहीं होते, उसी प्रकार राजपूत खवास खवासी का काम करके भी राजपूत बने रहते हैं, क्योंकि ये लोग राजपूतेतर अन्य खवासों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध नहीं करते।[३]

गोविन्द गिल्लाभाई के पूर्वज सौराष्ट्र में राजस्थान से आये थे। उन्होंने अपने पूर्वजों के सौराष्ट्र में आगमन के विषय में लिखा है कि "हमारे मुल पुरुषा जाति के चहुवान रजपूत मारवाड़ में जोधपुर में अग्नि कोन में ३० कोश पर पीपलाद गांव में रहते थे। वहां कुछ कुटुम्ब में परस्पर कलह होने से दो भाई रिसाइ के द्वारका तरफ यात्रा करने को चले आये और द्वारका नाथ का दर्शन करके काठियावाड़ में

१- वही, पृ० १६ की पाद टिप्पणी।

२- वही, पृ० १६।

३- वही, पृ० १६।

फिरते घूमते उंडसर वैयावाड में आये, तब वहां छोटे छोटे जमीनदार जुनागढ के राव वंशी सरवैया ठाकुर थे । उस समय लूट फाट और लड़ाइयां बहुत चलती थी । इसलिए सरवैया ठाकुर ने यह दो भाइ को बहुत सन्मान कर के रख लिये । उनमें से एक लडाइ में काम आ गये और दूसरा हीरा जी नाम का रहा सो उदास हो के अपना देश तरफ जाने को तैयार हुये । परन्तु सरवैया ठाकुर ने बहुत आग्रह से एक कारडिया रजपूत की कन्या साथ लग्न करवाय के अपनी पास रख लिये । उनको जो सन्तति भई वही हमारा कुटुम्ब है ।[१] जोधपुर के मुंशी देवी प्रसाद जी से पत्र व्यवहार कर गोविन्द गिल्लाभाई ने पता लगाया था कि पीपलाद वर्तमान सोजत परगने के अन्तर्गत आता है, परन्तु वहां आजकल चौहान राजपूत नहीं रहते, उसके निकटवर्ती गांव शिवराड में आज भी चौहानों के बहुत से घर हैं ।[२] आशय यह कि गोविन्द गिल्लाभाई के पूर्वज सौराष्ट्र में जोधपुर के सोजत परगने के पीपलाद नामक गांव से आये थे, जहां आजकल उनकी जाति के राजपूत नहीं रहते ।

उक्त सरवैया ठाकुरों का वैवाहिक सम्बन्ध सिहोर (बाद में भावनगर) के राज घराने से था । सिहोर के महाराजा भावसिंह जी, जिन्होंने सन् १७२२ में भावनगर की स्थापना की थी तथा उसे अपनी राजधानी बनाया था,[३] के जेष्ठ पुत्र अखेराज जी उर्फ भावाजी का विवाह भी उक्त सरवैया ठाकुर की किसी कन्या के साथ हुआ था । अखेराव जी के अन्तिम समय में या उनके पुत्र बखतसिंह जी की बाल्यावस्था में अखेराज जी की सरवैयाणी महारानी ने अपने पितृ गृह से एक वृद्धा,[४] जिसके तीन पुत्र थे, वहां दुखी जान, अपने पास सिहोर बुला लिया । तभी से उक्त वृद्धा के वंशज सिहोर के किले में निवास करते हैं । सिहोर में आने के पश्चात गोविन्द गिल्लाभाई के पूर्वज पहले दरबार में नौकरी करते थे । बाद में खवासी में दाखिल (महाराज की व्यक्तिगत सेवा) में प्रविष्ट हो गये ।[५] तभी से ये खवास

१- वही, पृ० १७ ।

२- वही, पृ० १७ की पाद टिप्पणी ।

३- History of Kathiawad - Capt. Wilberforce Bell, p.124.

४- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात, पृ० १८ गोविन्द गिल्लाभाई ।

५- वही, पृ० १६ ।

कहलाने लगे । सिहोर में आने के पश्चात से गोविंद गिल्लाभाई का वंश-वृक्ष इस प्रकार है[१]:

सिहोर में आने वाली वृद्धा

बालजी　रामजी　हरजी

(बालजी →) कीकाभाई

(कीकाभाई →) गोपाल जी　गिल्लाजी　शामजी　दुदाभाई

(गिल्लाजी →) गोविन्द　नथु　कहानजी　लछमण

(गोविन्द →) जयसिंह　भगवान　रायमल　भावजी

(जयसिंह →) हीरजी　रामजी　रघु

रामजी की संतति बहुत पहले से ही भावनगर में बस गयी थी, जबकि कीकाजी की संतति सिहोर में ही रही । गोविन्द गिल्लाभाई के समय तक इनका सारा परिवार सिहोर में ही था, परन्तु आजकल अधिकांश लोग जीविका के कारण सिहोर से बाहर जा बसे हैं । गोविन्द गिल्ला भाई के पौत्र आजकल बम्बई में रहते हैं ।

१- वही, पृ० २३ ।

३।२ जन्म तथा बाल्यावस्था

ऊपर दिये गये वंश वृक्ष से यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारे कवि का नाम गोविन्द था तथा उनके पिता का नाम श्री गिल्ला भाई। गुजरात में व्यक्ति के नाम के साथ पिता का नाम भी प्रयुक्त होता है। अत: हमारे कवि सर्वत्र गोविन्द गिल्लाभाई के नाम से ही पहिचाने जाते हैं। इनकी माता का नाम लविंगा बाई था जिनके गर्भ से इनका जन्म सिहोर में सं० १९०५ श्रावण सुदि ११ सोमवार के दिन प्रात: काल हुआ था[१]। नथु, कहान तथा लक्ष्मण नाम के गोविन्द गिल्लाभाई के तीन और भाई थे तथा गंगा और गोमती नाम की दो बहिनें थीं[२]। परन्तु गोविन्द गिल्लाभाई इन सब में बड़े थे[३]।

गोविन्द गिल्लाभाई का सारा बाल्यकाल सिहोर में ही व्यतीत हुआ। वहीं इनकी प्रारंभिक शिक्षा की व्यवस्था की गयी थी। इनके पिता श्री गिल्लाभाई दरबार की तरफ से सिहोर के किले में नौकरी करते थे[४]। वहीं निकट इनका मकान था। सिहोर के किले तथा उसके आसपास खेलते कूदते गोविन्द गिल्लाभाई का बाल्य काल व्यतीत हुआ है। उसमें किसी उल्लेखनीय घटना का पता नहीं चला है।

३।३ शिक्षा-दीक्षा तथा ज्ञानार्जन

सात आठ वर्ष की आयु में सर्वप्रथम सिहोर में परमो भात नामक वृद्ध राजपूत ने, जो कुछ बालकों को एकत्रित करके पढ़ाया लिखाया करते थे, गोविन्द गिल्लाभाई को अक्षर ज्ञान कराया[५]। सन् १८८५ के आसपास सिहोर में दरबार की ओर से एक सरकारी गुजराती निशाल (गुजराती पाठशाला) स्थापित हुई। वहां भावनगर के श्रीमाली ब्राह्मण श्री शिवशंकर गोविन्दराम नाम के शिक्षक के पास गोविन्द

१- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात - गोविन्द गिल्लाभाई, पृ० १९।

२- वही, पृ० १८।

३- वही, पृ० १८।

४- स्मरण पोथी, पृ० ३।

५- वही, पृ० २।

गिल्लाभाई ने गुजराती का सातवीं कक्षा तक अध्ययन किया ।[१] तत्पश्चात विवाह हो जाने के कारण तथा सिहोर में आगे विद्यालयीय शिक्षा की व्यवस्था न होने के कारण गोविन्द गिल्लाभाई की व्यवस्थित शिक्षा दीक्षा यहीं समाप्त होगयी ।[२]

आगे गोविन्द गिल्लाभाई ने जो भी ज्ञानार्जन किया, उसके मूल में उनकी ज्ञान-पिपासा ही थी तथा उसका रूप स्वाध्याय ही रहा । परन्तु इस प्रसंग में सिहोर के लोकागच्छ के श्वेताम्बरी जैन साधु श्री पानाचंद जी का नाम नहीं भुलाया जा सकता । वे बहुत ही श्रेष्ठ विद्वान् थे तथा हिन्दी कविता तथा काव्य शास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे । इन्हीं जैन साधु[३] के सहवास में गोविन्द गिल्लाभाई को कविता नो रंग (कविता का रंग) लगा था ।

श्री पानाचंद जी के पास गोविन्द गिल्लाभाई ने शामल भट्ट द्वारा गुजराती आख्यान काव्य तथा अन्य लेखकों द्वारा रचित उपन्यास, नाटक तथा कथा-वार्ता आदि का परिचय प्राप्त किया ।[४] इन्हीं पानाचंद जी के पास गोविन्द गिल्लाभाई अपनी प्रथम काव्य रचना दिखाने गये थे तथा इन्हीं से पिंगल तथा अन्य काव्यशास्त्र से सम्बद्ध ग्रंथ जैसे नन्ददास कृत मान मंजरी आदि का अध्ययन किया था ।[५]

इसके अतिरिक्त विद्वान एवं कवि जनों का सहवास गोविन्द गिल्लाभाई के लिए ज्ञानार्जन का एक प्रमुख साधन था । भावनगर दरबार में आनेवाले कवि तथा विद्वान सिहोर में आकर कभी कभी किले में बहुत समय तक रहा करते थे तथा उनके सहवास से गोविन्द गिल्लाभाई को सहज ही ज्ञान लाभ हो जाता था । क्योंकि

१- स्मरण पोथी, पृ० २ ।

२- वही ।

३- वही, पृ० ३ ।

४- वही ।

५- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात , पृ० २० ।

इनके पिता श्री गिल्लाभाई को दरबार की ओर से सिहोर के किले में अतिथि सत्कार का कार्य सौंपा गया था[१]। भावनगर के महाराज श्री बख्तसिंह जी तथा उनके युवराज श्री विजयसिंह जी के राज्यत्वकाल में दशहरा उत्सव बड़े उत्साह से मनाया जाता था, जिसमें देश विदेश के अनेक विद्वान कवि, भाट, चारण आदि आया करते थे। काव्य शास्त्र चर्चा दशहरा उत्सव की एक बड़ी विशेषता थी। इस प्रसंग में श्रेष्ठ कवि तथा विद्वानों को राजा पुरस्कार आदि प्रदान कर सम्मानित करते थे[२]। इस प्रकार प्रति वर्ष गोविन्द गिल्लाभाई को देश विदेश के अनेक विद्वान् तथा कवियों का परिचय प्राप्त होता था और उनके सहवास में इन्हें विविध प्रकार का ज्ञान तो मिलता ही था, साथ ही इनकी ज्ञान पिपासा दिन प्रति दिन तीव्रतर होती जाती थी[३]। गोविन्द गिल्लाभाई ने लिखा है कि "राव चारनो की वार्ता सुनने और विधापर भाव होने से इतिहास पुरान उपन्यास नाटक चरित्र कथा आदिक अनेक विषय के ग्रन्थों निरन्तर पढा करते थे। उनसें और विद्वानों का प्रसंगतें (संगति से) विधा पर विशेष रुचि हुई[४]।"

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि सातवीं कक्षा तक पाठशाला में गुजराती की शिक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात, जैन साधु श्री पानाचंद जी, द्वारा काव्य और शास्त्र का यत् किंचित् ज्ञान प्राप्त किया तथा इसके पश्चात् विद्वानों तथा कवियों के साहचर्य एवं स्वाध्याय से गोविन्द गिल्लाभाई ने आगे विविध विषयों का ज्ञान प्राप्त किया। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि कब और किस प्रकार इन्होंने किन किन विषयों का ज्ञान प्राप्त किया। परन्तु इनकी डायरी तथा अन्य स्फुट कागज पत्रों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इतिहास, पुरातत्व,

---

१- स्मरण पोथी, पृ० ३।

२- वही, पृ० २-३।

३- वही, पृ० ३।

४- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात, पृ० १९-२०।

काव्यशास्त्र, संगीत, छंद, कोष, धर्म, दर्शन तथा संस्कृत, हिन्दी और गुजराती साहित्य का इन्होंने विशेष रूप से अध्ययन किया था। इतिहास, काव्य शास्त्र, कोष, कामशास्त्र, उपनिषद् आदि विषयों के गहन अध्ययन का प्रमाण तो हमें कवि की तद्विषयक रचनाओं (स्वतंत्र एवं अनूदित रचनाओं के रूप में) के रूप में मिल ही जाता है।[1] परन्तु संगीत, छंद, पुरातत्व, पुराण आदि के अध्ययन का प्रमाण कृति रूप में न मिल कर, उल्लेख रूप में मिलता है। गोविन्द गिल्लाभाई की व्यक्तिगत डायरियों तथा स्फुट कागज पत्रों के अध्ययन से यह बात निर्विवाद रूप से सिद्ध हो जाती है कि इन विषयों का उन्होंने गहन अध्ययन किया था। संगीत, छंद शास्त्र, कोष तथा पुराणादि विषयक अनेक हिन्दी तथा संस्कृत ग्रंथों की वृहद् सूची तथा अनेक उद्धरण इनकी डायरियों में मिलते हैं।[2] सिहोर तथा उसके अनेक निकटवर्ती ऐतिहासिक स्थलों पर मिले हुए अनेक प्राचीन शिलालेखों की नकल इनके स्फुट कागजों में मिली हैं जो इनकी इतिहास तथा पुरातत्व विषयक रुचि तथा अध्ययन की परिचायिका मानी जा सकती हैं।[3] इसी प्रकार और भी अनेक विषयों से सम्बद्ध विविध प्रकार की सामग्री इनके कागज-पत्रों तथा डायरियों में उपलब्ध होती है, जिसके अध्ययन से यह स्पष्टत: सिद्ध हो जाता है कि इन्होंने समय समय पर विद्वन्मण्डली के साहचर्य एवं स्वाध्याय से अनेक शास्त्रों का गहन अध्ययन किया था।

सम्भवत: गोविन्द गिल्लाभाई को संस्कृत, हिन्दी तथा गुजराती भाषाओं का ही ज्ञान था, क्योंकि इन भाषाओं के साहित्य के अतिरिक्त किसी अन्य भाषा के साहित्य अथवा किसी ग्रंथ का इस प्रकार उल्लेख आदि नहीं मिलता, जिससे यह सिद्ध हो कि इन्हें इन भाषाओं के अतिरिक्त किसी और भी भाषा का ज्ञान था। अरबी फारसी के शब्दों का एक संक्षिप्त शब्दार्थ संग्रह इनके स्फुट कागजों में प्राप्त हुआ है[4] परन्तु उससे यह सिद्ध नहीं किया जा सकता कि इन्हें अरबी फारसी का

१- देखिए, स्मरण पोथी, पृ० ३०।

२- ,, लघु डायरी (दो) तथा स्फुट कागज पत्र क्रमश: ह० प्र०सं० १७५, २०६।

३- ,, स्फुट कागज पत्र ह० प्र० सं० २०६।

४- ,, वही।

विशेष ज्ञान था । सम्भवत: यह अरबी फारसी शब्दार्थ संग्रह भूषण की शिवराज भूषण एवं शिवराज शतक रचनाओं की गुजराती टीका करते समय तैयार किया होगा। भूषण की रचनाओं में इस प्रकार के शब्दों का विशेष प्रयोग भी हुआ है । और इनकी रचनाओं में अरबी फारसी के शब्दों का प्रयोग भी अत्यन्त विरल है जिससे यही सिद्ध होता है कि इन्हें अरबी फारसी भाषाओं का विशेष ज्ञान न था । आशय यह कि गोविन्द गिल्लाभाई ने संस्कृत, हिन्दी तथा गुजराती भाषाओं का ही अध्ययन किया था तथा इन्हीं के माध्यम से अपनी अभिरुचि के अनेकानेक विषयों का गहन अध्ययन किया था ।

सिहोर जैसे सामान्य नगर में खवासों के सामान्य परिवार में उत्पन्न होकर गोविन्द गिल्लाभाई के जैन साधु श्री पानाचंद जी जैसे व्यक्ति तथा दरबार में कुछ समय के लिए आने वाले विद्वानों के अतिरिक्त ज्ञानार्जन का कोई अन्य साधन न था । काव्य तथा शास्त्र - साधना से सदा विरक्त खवास परिवार में उत्पन्न व्यक्ति के लिए ज्ञानार्जन एक महान् समस्या ही थी । इस पर भी उस समय प्रकाशित पुस्तकों का प्राय: अभाव एक ऐसी स्थिति थी कि जिसके कारण जिज्ञासा तथा क्षमता दोनों के होते हुए भी ज्ञान प्राप्ति केवल कष्ट साध्य साधना ही सिद्ध होती थी । परन्तु गोविन्द गिल्लाभाई ने ऐसी परिस्थितियों में रह कर जो साधना की एवं उसमें सिद्धि प्राप्त की वह वास्तव में उनके दृढ़ निश्चयी एवं कर्मठ व्यक्तित्व की परिचायिका है । अपनी इस परिस्थिति का वर्णन करते हुए एक स्थान पर इन्होंने लिखा है कि "संस्कृत अने हिन्दी भाषा मां प्रथम छपायेल ग्रंथो मुंबई, बनारस, लखनऊ, कलकत्ता आदिक नगरों मां थी जेटला मल्या तेटला मंगावी ब्रजभाषा भणवी शरू करी अने जेम तेमां समज पडती गयी तेम तेम तेमां विशेष रस एटले आणंद आवतो गयो । तेथी तेमनो (गोविन्द गिल्लाभाई) उत्साह बध्यो, अने वधारे सर्वोत्तम सर्व साहित्य ना केटलाक ग्रंथो जे छपाया नथी, तेवा घणी सिफारस थी अने भलामण पत्रो थी लखावी लखावी ने मंगाववा शरू कर्या । अने आखा हिन्द ना मुख्य मुख्य शेहरो मां थी तेवा ग्रंथो लखावी मगाव्या । ने हजु पण ते प्रमाणे काव्य ना लक्षण ग्रंथो

लखाववानुं काम शरू छे । - - - - तेमज संस्कृत अने भाषा काव्यो ना लक्षण ग्रंथों केटलाक टेकाणे कठिण अथवा संक्षिप्त होवा थी बराबर ज्यां नहीं समजातु हतु त्यारे मूल संस्कृत सटीक ग्रंथों पर थी विद्वानो पासे समझी लेता हता । एम. निरंतर बालपण थी आज पर्यंत काव्य ना लक्षण ग्रंथों नो अभ्यास कर्यो छे, तथापि पोते कहे छे हुं हजु काव्य समुद्र नो पार पाम्यो नथी ।[१] " (संस्कृत और हिन्दी भाषा में प्रथम प्रकाशित ग्रंथ, बम्बई, बनारस, लखनऊ, कलकत्ता आदि नगरों में से जितने मिले उतने मगवा कर ब्रजभाषा पढ़ना शुरू किया और जैसे जैसे उसमें कुछ समझ में आने लगा वैसे वैसे उसमें विशेष रस अर्थात् आनंद आने लगा । इससे उनका (गोविन्द गिल्लाभाई) उत्साह बढ़ा और अधिक सर्वोत्तम सभी प्रकार के साहित्य के अनेकानेक ग्रंथ जो छपे नहीं थे उन्हें बड़ी शिफारिस से और शिफारसी पत्रों से लिखवा कर मगवाना शुरू किया और सारे हिन्दुस्तान के मुख्य मुख्य शहरों से लिखवा कर मगवाया और अब भी उसी प्रकार काव्य के लक्षण ग्रंथ लिखवाने का काम चल रहा है । - - - - इसी प्रकार संस्कृत तथा भाषा काव्य के लक्षण ग्रंथ कितनी ही जगह कठिन अथवा संक्षिप्त होने के कारण ठीक से जहां समझ में नहीं आते थे वहां मूल संस्कृत सटीक ग्रंथों से विद्वानों की सहायता से समझ लेते थे । इस प्रकार बाल्यकाल से आज तक काव्य के लक्षण ग्रंथों का अध्ययन किया है । फिर भी आप कहते हैं कि अभी काव्य समुद्र का पार नहीं पाया है ।)

गोविन्द गिल्लाभाई के उक्त कथन से उनकी काव्य साधना तथा स्वाध्याय की कठिनाईयों का चित्र सहज ही स्पष्ट हो जाता है । उक्त परिस्थितियों के कारण उनमें ग्रंथ-संग्रह की प्रवृत्ति विशेष रूप से विकसित हो गयी । सं० १९२७ में भावनगर के श्री छगनलाल संतोषराम देसाई ने गोविन्द गिल्लाभाई को कुछ पुस्तकें पुरस्कार रूप में दे दी थी[२] इसी प्रकार सं० १९२९ में पालीताना के जाड़ेजा ठाकुर श्री केसरी सिंह से भी कुछ पुस्तकें इन्हें प्राप्त हुई थी[३] । इस प्रकार सिहोर तथा उसके आसपास

१- स्मरण पोथी, पृ० ४ ।

२- वही, पृ० ५ ।

३- वही, पृ० ६ ।

के स्थानों से इन्होंने आवश्यक पुस्तकें, कभी पुरस्कार तथा कभी पैसा दे कर प्राप्त कीं तथा अपना अध्ययन आगे बढ़ाया । राजस्थान और सौराष्ट्र के नरेशों के राजकीय ग्रंथ संग्रहों से भी इन्होंने कतिपय दुर्लभ ग्रंथों की प्रतिलिपियां की और करवाईं । उदाहरणार्थ हरभम जी के सहयोग से उन्होंने भरतपुर के राजकीय पुस्तकालय के अनेक अलभ्य ग्रंथों की प्रतिलिपि की थी । ये ग्रंथ अब भरतपुर के राजकीय पुस्तक-संग्रह में भी नहीं है । इस प्रकार गोविन्द गिल्लाभाई में पुस्तक संग्रह करने की प्रवृत्ति विकसित हुई/ परिणामस्वरूप इनके पास हस्तलिखित तथा प्रकाशित पुस्तकों का एक बड़ा ही अच्छा संग्रह हो गया था, जिसका उल्लेख हिन्दी के इतिहासकारों ने भी किया है ।[1] योग्य साहित्य प्रेमी उत्तराधिकारी के न होने के कारण गोविन्द गिल्लाभाई का यह मूल्यवान संग्रह नष्टप्राय हो गया है/ परन्तु महाराजा सयाजी राव विश्व विधालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष कुंवर चंद्र प्रकाश सिंह के शोध-प्रयासों से उसका एक अंश प्राप्त हुआ है और अब उनके विभाग में सुरक्षित किया जा सका है ।

३।४ हिन्दी काव्य रचना

गोविन्द गिल्लाभाई की शिक्षा आदि के विषय में विचार करते समय स्पष्ट किया जा चुका है कि किशोरावस्था में सिहोर के दशहरा-उत्सव के समय देश विदेश के आने वाले अनेक विद्वान, कवि तथा चारण भाटों तथा जैन साधु श्री पानाचंद जी के सहवास में ही इनमें काव्य के प्रति सुरुचि उत्पन्न हो गयी थी । परिणाम स्वरूप इस काल में ही इन्होंने एक पद्य आख्यान काव्य गुजराती में लिखा ।[2] अपनी स्मरण पोथी में इसके विषय में गोविन्द गिल्लाभाई नेलिखा है कि "तेथी तेमां विशष रुचि थवा थी शामल भट्ट ना जेवी एक वार्ता रचवा मांडी, ने थोड़ी घणी रची । जैन साधु महाराज पानाचंद जी ने बतावी त्यारे तेमणे जोइने कह्युं के आमां दोहा चौपाई ना नियम न थी, माटे ते तेना लक्षण प्रमाणे थवानी जरूर छे ।

१- द्रष्टव्य है, हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० ५५५ ।
२- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोदघात, पृ० २० ।

कवि दलपतराम डाह्या भाई कृत गुजराती पिंगल आखुं जोई गये[१]। तेथी छंदो ना नियमो एटले लक्षणो बराबर समझ्या, ते पछी मित्रो प्रसंगोपात पत्र मां लखवा दृष्टान्तिक अने गूढ़ कूट समस्या अने पहेली आदिक कविता नो संग्रह करवा लाग्यो। तेथी कविता पर विशेष रूचि थई, ने जेवी तेवी कविता पण रचवा मांणी।[२]" (उससे उसमें विशेष रुचि होने से शामल भट्ट की तरह एक कथा (काव्य) लिखना प्रारम्भ किया और थोड़ी बहुत लिखी भी। जैन साधु महाराज पानाचंद जी को जब दिखलाई तब उन्होंने देख कर कहा कि इसमें दोहे चौपाई के नियम नहीं हैं, इसलिए इसे उनके लक्षणों के अनुसार करना आवश्यक है। - कवि दलपतराम डाह्याभाई कृत गुजराती पिंगल सारा देख गया, इससे छंदों के नियम अर्थात् लक्षण ठीक ठीक समझ में आ गये। इसके पश्चात् मित्रों के लिए समय समय पर पत्र लिखने के लिए दृष्टान्तिक और गूढ़ कूट समस्या और प्रहेलिका आदि कविताओं का सग्रह करने लगा। इससे कविता पर विशेष रुचि हुई तथा जैसी तैसी कविता भी लिखने लगा।) आशय यह कि गोविन्द गिल्ला भाई में संगति के कारण कविता आदि पढ़ने की प्रवृत्ति जागृत हुई, जो आगे चल कर कविता करने की प्रवृत्ति में विकसित हो गयी। इन्होंने प्रथम गुजराती में रचना करना प्रारम्भ किया तथा गुजराती भाषा में ही पिंगल आदि का अध्ययन भी किया। परन्तु उससे इन्हें संतोष न हुआ। इसलिए फिर हिन्दी में काव्यशास्त्र तथा पिंगल आदि का अध्ययन प्रारम्भ किया और फिर उसी में कविता करना प्रारंभ कर दिया।

१- गोविन्द ग्रंथमाला प्रथम भाग उपोद्घात के पृ० २० की पाद टिप्पणी में इस विषय में जो लिखा है वह तुलनीय है। वहां लिखा है कि "उस समय गुजराती भाषा में कवि दलपत राम का पिंगल और नर्मदाशंदर का पिंगल प्रवेश तथा रस प्रवेश यह तीन ग्रंथ हमको मिले थे परन्तु वह अपूर्ण (अपूर्ण) होने से विशेष लाभ नहि हुवा था।"

२- स्मरण पोथी, पृ० ३-४।

गोविन्द गिल्लाभाई के उक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उस समय गुजरात में हिन्दी काव्य तथा काव्यशास्त्र के पठन पाठन की सर्व सामान्य परम्परा थी, जिसके कारण न केवल इन्हें सिहोर में उस समय हिन्दी के काव्य तथा शास्त्र ग्रंथ उपलब्ध हो सके वरन् उनके प्रारम्भिक अध्ययन का सुयोग भी प्राप्त हो सका ।

शामल भट्ट के आख्यान काव्यों के समान जो वार्ता काव्य गोविन्द गिल्ला भाई ने लिखा था, कदाचित् उसी समय नष्ट कर दिया होगा या उसके महत्व हीन रचना होने के कारण वह स्वत: नष्ट हो गया होगा । इस रचना के पश्चात भी गुजराती में इन्होंने तीन और रचना की थी, जिनके नाम हैं, विश्व दर्पण, कुधारा पर सुधारा नी चढ़ाई तथा व्यभिचार निषेध बावनी[1]। ये तीनों रचना सं० १९२५ और १९२९ में प्रकाशित हो चुकी हैं[2] परन्तु आजकल अप्राप्य हैं । विश्व दर्पण के कुछ स्फुट पत्र उपलब्ध हुए हैं , जिनमें कुछ दोहे हिन्दी के भी हैं, जिससे अनुमान किया जा सकता है कि इन रचनाओं में कुछ हिन्दी की रचना भी संग्रहीत कर ली गयी थी । वस्तु स्थिति जो भी हो परन्तु इतना निश्चित है कि सं० १९२० के आसपास ये हिन्दी में भी रचना करने लगे थे, जिनमें से कुछ रचना इनकी 'विवेक विलास 'नामक रचना में संग्रहीत हैं[3]। विवेक विलास इनकी प्रथम हिन्दी रचना है, जो सं० १९२७ में भावनगर से प्रकाशित हुई थी[4]।

उक्त गुजराती रचनाओं के प्रकाशित होने के पश्चात अनेक विद्वान् तथा कवियों द्वारा गोविन्द गिल्लाभाई को अच्छा प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था तथा काव्य शास्त्र के अध्ययन करने का परामर्श भी[5]। गुजराती भाषा में काव्यशास्त्र के

१- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात्, पृ० २० ।

२- स्मरण पोथी, पृ० ७-८ ।

३- वही, पृ० ६३ ।

४- वही, पृ० ७ ।

५- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात्, पृ० २० ।

अच्छे ग्रंथों का तब अभाव होने के कारण, इन्हें संस्कृत तथा हिन्दी का विशेष अध्ययन करना पड़ा।[1] परिणाम स्वरूप फिर ये हिन्दी में ही लिखते गये। अपनी प्रौढ़ावस्था में इन्होंने गुजराती में स्फुट लेख, टीका, अनुवाद आदि के अतिरिक्त विशेष और कुछ भी नहीं लिखा। गुजराती साहित्य का इतिहास गोविन्द गिल्लाभाई से, इसीलिए पूर्णत: अपरिचित है।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि गुजरात में प्रचलित हिन्दी की शास्त्रीय काव्य तथा शास्त्रीय साहित्य की परम्परा ने गोविन्द गिल्लाभाई को हिन्दी की ओर आकृष्ट किया, और उन्हें हिन्दी की सेवा में प्रवृत्त किया, जो वे अपने जीवन के अन्तिम समय तक करते रहे। गोविन्द गिल्लाभाई ने हिन्दी की सेवा अनेक रूपों में अनेक प्रकार से की है। वस्तुत: उनका सारा कृतित्व हिन्दी सेवक का ही है, जिसका परिचय हम आगे प्राप्त करेंगे। यहां केवल इतना ही ज्ञातव्य है कि गुजरात की हिन्दी काव्य परम्परा के जिन कारणों का पहले विवेचन किया जा चुका है, उनमें से गुजरात में हिन्दी के शिष्ट भाषा रूप में स्वीकृत हो जाने के कारण हिन्दी में जो शास्त्रीय साहित्य तथा शास्त्रीय काव्य की परम्परा स्थापित हुई, उसे ही गोविन्द गिल्लाभाई के कृतित्व के मूल में प्रमुख कारण माना जा सकता है।

३।५ पारिवारिक जीवन

पहले कहा जा चुका है कि सिहोर में गुजराती की सातवीं कक्षा से आगे विद्यालयीय शिक्षा की व्यवस्था न होने के साथ साथ अल्पायु में ही विवाह हो जाने के कारण भी गोविन्द गिल्लाभाई व्यवस्थित रूप से आगे न पढ़ सके और पारिवारिक जीवन व्यतीत करने लगे। इनका विवाह सं० १६१६ में वसंत पंचमी के दिन सिहोर में श्री करसन भाई परमार की कन्या जानबाई के साथ सम्पन्न हुआ था।[2] १४ वर्ष की अल्प आयु में ही, जैसा कि उस समय की सामान्य रिवाज

१- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात, पृ० २०।

२- स्मरण पोथी, पृ० २।

थी, गोविन्द गिल्लाभाई पर विवाह हो जाने के कारण पारिवारिक उत्तरदायित्व आ गया था । सं० १९२५ में इनके प्रथम पुत्र, जयसिंह का जन्म हुआ एवं तदोपरांत सं० १९२९ में शामबाई, सं० १९३२ में देवजी, सं० १९३५ में भगवान, सं० १९३९ में रायमल, सं० १९४२ में हरि बहिन, सं० १९४४ में जीवी बहिन सं० १९४६ में मणि बहिन और सं० १९४८ में भावजी का जन्म हुआ । इस प्रकार उक्त पांच पुत्र तथा चार पुत्रियों में एक पुत्र देवजी तथा चारों पुत्रियों का अवसान बाल्यावस्था में ही हो गया था[1] । शेष चार पुत्रों में जेष्ठ पुत्र जयसिंह की अकाल मृत्यु[2] काशी में, वरल दरबार श्री हरिसिंह जी के साथ विष से सं० १९५८ में हो गयी थी, जिसका कवि को बहुत दुख हुआ था । जयसिंह का विवाह गोविन्द गिल्लाभाई ने दो बार किया था। उनकी द्वितीय विवाह की पत्नी से हीर जी, रामजी, एवं रघु नामक तीन पुत्र हुए थे, जिनमें से अन्तिम आजकल सपरिवार बम्बई में निवास करते हैं ।

गोविन्द गिल्लाभाई कब तक अपने पिता तथा भाइयों के साथ संयुक्त परिवार में रहे थे, निश्चित रूप से[3] नहीं कहा जा सकता । इनके पिता श्री गिल्लाभाई की मृत्यु[4] सं० १९५६ में हुई थी तथा माता लविंगा बाई सं० १९६९ में स्वर्गवासी हुई थी । परन्तु लविंगाबाई ने सं० १९६० में अपने चारों पुत्रों को घर की सारी वस्तुओं को बांटा, इस प्रकार का एक उल्लेख मिलता है[5] । सं० १९३४ में गोविन्द गिल्लाभाई ने अपनी माता से चार रुपये में एक चक्की खरीदी थी,[6] जिससे अनुमान किया जा सकता है ये सं० १९३४ से पहले ही अपने माता पिता तथा भाइयों से अलग हो चुके थे। परन्तु बटवारा सं० १९६० में पिता की मृत्यु के पश्चात माता द्वारा हुआ था ।

१- स्मरण पोथी, पृ० १ ।
२- वही, पृ० १६ ।
३- वही, पृ० १५ ।
४- वही, पृ० २५ ।
५- वही, पृ० १९ ।
६- वही, पृ० ९ ।

Smt. HANSA MEHTA LIBRARY
MAHARAJA SAYAJIRAO UNIVERSITY OF BARODA

भाइयों के परिवार के अतिरिक्त स्वयं गोविन्द गिल्लाभाई का परिवार काफी भरा पूरा था । अत: बड़े परिवार के सुखद अनुभवों के साथ साथ बड़े उत्तर दायित्वों का भी वहन करना पड़ा था । गोविन्द गिल्लाभाई ने अपने सभी पुत्रों के लिए उचित शिक्षा आदि की व्यवस्था तो की ही थी, साथ ही उन सब का विवाह आदि कर के उन्हें नौकरियों पर भी लगवा दिया था । जयसिंह की मृत्यु के पश्चात उनके पुत्रों, हीर जी, राम जी और रघु की शिक्षा आदि की व्यवस्था भी गोविन्द गिल्लाभाई ही ने की थी । हीर जी की मृत्यु सं० १९६९ में हो गयी थी,[1] परन्तु राम जी तथा रघु का विवाह आदि कर उन्हें आजीविका कमाने योग्य बना कर सं० १९८२ के जेष्ठ मास की १४ गुरुवार को सायंकाल लगभग ६ बजे, ७७ वर्ष की सुदीर्घ आयु भोग कर गोविन्द गिल्लाभाई स्वर्गस्थ हुए थे ।[2]

गोविन्द गिल्लाभाई ने अपनी स्मरण पोथी अथवा डायरी बुक में वैसे सं० १९८२ तक की सभी विशेष घटनाओं का उल्लेख किया है, परन्तु सं० १९७६ में रायमल की पत्नी की अंत्येष्टि क्रिया के उल्लेख के पश्चात् क्रमश: वर्षानुक्रम में डायरी नहीं लिखी है । इस डायरी में गोविन्द गिल्लाभाई ने केवल घटनाओं का ही उल्लेख किया है, उनके अनुभूति पक्ष का कहीं भी संकेत नहीं किया है । अत: पारिवारिक जीवन के अनुभूति पक्ष के विषय में कुछ भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता । परन्तु इन घटनाओं के उल्लेखों के अध्ययन से यह स्पष्ट अवश्य हो जाता है कि पारिवारिक जीवन में कवि को सुखद और दुखद दोनों प्रकार की अनुभूतियों का पर्याप्त अनुभव हुआ था । परन्तु इनमें भावुकता का अतिरेक कहीं भी नहीं देखा जा सकता । आशय यह कि जीवन काल की व्यापकता तथा विविधता के कारण गोविन्द गिल्लाभाई को अनेकानेक प्रकार की अनुभूतियां हुई होंगी, परन्तु भावुकता के अतिरेक के अभाव के कारण उनकी इतर प्रवृत्तियों में किसी प्रकार का व्यवधान दृष्टिगोचर नहीं होता । अर्थात् पारिवारिक जीवन की विविध प्रवृत्तियों के साथ साथ उनकी साहित्यिक प्रवृत्तियां निर्बाध रूप से चलती रही थी ।

१- स्मरण पोथी, पृ० २८ ।

२- इस सूचना के लिए मैं गोविन्द गिल्लाभाई के पौत्र श्री रघुसिंह जी का आभारी हूं ।

३।६ भ्रमण तथा यात्रा

गोविन्द गिल्लाभाई ने अपने जीवन काल में अनेक यात्राएं की हैं । परन्तु कुछ यात्राओं, जिनके मूल में साहित्य ही प्रयोजन रूप रहा है, के अपवाद के साथ अधिकांश यात्राएं, आजीविका अथवा किसी ऐसे ही प्रयोजन के कारण सम्पन्न हुई हैं । परन्तु उन यात्राओं में भी उन्होंने साहित्य सेवा किसी न किसी रूप में की अवश्य है । अत: इन यात्राओं का यहां संक्षिप्त उल्लेख किया जा रहा है ।

साहित्य की दृष्टि से गोविन्द गिल्लाभाई की यात्राओं का प्रयोजन या तो प्राचीन साहित्य की शोध रहा है या साहित्य प्रकाशन । यहां उन्हीं यात्राओं का उल्लेख किया जायेगा जिनका प्रत्यक्ष या परोक्ष, किसी न किसी रूप में सम्बन्ध साहित्य के साथ रहा है ।

अपने प्रथम गुजराती ग्रंथ विश्व दर्पण के प्रकाशनार्थ गोविन्द गिल्लाभाई ने प्रथम बार भावनगर की यात्रा की थी, जिसका उल्लेख हमें मिलता है[१]। भावनगर सिहोर से बहुत दूर नहीं है, परन्तु साहित्य प्रकाशन के ध्येय से सर्वप्रथम सं० १९२५ में इन्होंने भावनगर की यात्रा की थी[२]। सं० १९२७ में भावनगर में ही इन्हें श्री छगनलाल संतोषराम देसाई तथा सं० १९२९ में जाड़ेजा ठाकुर श्री केसरी सिंह द्वारा अनेक संस्कृत तथा हिन्दी के प्रकाशित तथा हस्तलिखित ग्रंथ प्राप्त हुए थे[३]। इसके पश्चात सं० १९२८ में गोविन्द गिल्लाभाई ने प्रथम बार बम्बई की यात्रा की थी[४]। परन्तु इसका प्रयोजन अज्ञात ही है । द्वितीय बार सं० १९२९ में कार्तिक मास में बम्बई

१- स्मरण पोथी, पृ० ७ ।

२- वही, पृ० ७ ।

३- वही, पृ० ५-६ ।

४- वही, पृ० ७ ।

को यात्रा की थी और वहां कुछ मास रह कर[1] अपनी कुछ रचनाओं तथा अमृतधारा नामक ग्रंथ का प्रकाशन कार्य किया था। सं० १६३० और १६३३ के बीच हिन्दी के अनेक ग्रंथों की खोज में तीन बार बम्बई की यात्रा की तथा उन्हें खरीद कर सिहोर लाये[2]। सं० १६३४ में आजीविका के लिए इन्हें बम्बई जाना पड़ा था, तथा वहां शाह मोन सिंह माणेक के ग्रंथ सागर प्रेस में पुस्तक सुधारक की नौकरी कुछ मास तक की थी[3]। सौराष्ट्र के तत्कालीन हिन्दी प्रेमी ठाकुर श्री हरिसिंह जो रावल के साथ सं० १६३८ में पुन: बम्बई गये थे[4]। इसी प्रकार सं० १६४० और १६४२ के बीच कुछ आवश्यक पुस्तकों की खोज में दो बार बम्बई जाना पड़ा था[5]।

सं० १६५२ में गोविन्दगिल्लाभाई ने प्रथम बार हिन्दी भाषी प्रदेश की यात्रा की। इस बार वे यद्यपि साहित्येतर प्रयोजन से हो भरतपुर गये थे, परन्तु उन्होंने इस अवसर का उपयोग अपनी साहित्य साधना के लिए भी किया। वरल दरबार श्री हरिसिंह जी की कुंवरी कुसुमावतो की सगाई, मोरवी दरबार के भाई श्री हरभम जी, जो उस समय भरतपुर राज्य के मैनेजर के रूप में काम कर रहे थे, के साथ करने के लिए गोविन्द गिल्लाभाई को भरतपुर भेजा गया था। उस समय इन्होंने भरतपुर के साथ साथ मथुरा, आगरा तथा ब्रज के अन्य अनेक स्थलों की यात्रा की तथा वहां से ब्रजभाषा के अनेक हस्तलिखित ग्रंथों की नकल करवा कर अपने साथ ले आये[6]।

इसी प्रकार सं० १६५३ में बढ़वाण दरबार श्री बालसिंह जी की कुंवरी की सगाई करौली नरेश के साथ निश्चित करने के लिए गोविन्द गिल्लाभाई ने करौली

१- स्मरण पोथी, पृ० ७।

२- वही, पृ० ८।

३- वही, पृ० ६।

४- वही, पृ० ६।

५- वही, पृ० १०-११।

६- वही, पृ० १४।

की यात्रा की थी, परन्तु इस समय भी वे किसी बिहारी लाल अग्रवाल के पास से अनेक अलभ्य हिन्दी हस्तलिखित ग्रंथ खरीद कर सिहोर लौटे थे[१]।

इसके पश्चात् इन्होंने सं०१९५७ तथा १९६० में कुछ दिनों की बम्बई तथा राजकोट की यात्राएं की थीं,[२] तथा सं० १९६० में ही प्रभास पाटण एवं १९६१ में द्वारिका आदि तीर्थों की यात्रा करने गये थे[३]। सं० १९६५ में गुजराती साहित्य परिषद् का तृतीय अधिवेशन राजकोट में हुआ था, जिसमें गोविन्द गिल्लाभाई उपस्थित रहे थे[४]। सं०१९६७ में इन्होंने अपने ग्रंथ गोविन्द ग्रंथमाला के प्रकाशन के प्रसंग में बम्बई तथा राजकोट की यात्राएं की हैं[५]। यह गोविन्द गिल्लाभाई की कदाचित् अंतिम यात्रा थी, क्योंकि इसके पश्चात् किसी अन्य यात्रा का उल्लेख नहीं मिलता। साथ ही अवस्था इतनी हो गयी थी कि अब यात्रा आदि करना असम्भ ही प्रतीत होता है।

इन यात्राओं के अतिरिक्त गोविन्द गिल्लाभाई सिहोर तथा भावनगर के आसपास के सभी स्थानों पर घूमा करते थे तथा वहां साहित्य अथवा इतिहास आदि किसी विषय से सम्बद्ध जो भी सामग्री उपलब्ध होती थी, उसे ले जाते थे। इस प्रकार घूम घूम कर इन्होंने शिलालेखों तथा हस्तलिखित ग्रंथों की नकलें तथा हस्तलिखित ग्रंथों और अन्य इतिहास सम्बन्धी सामग्री का अपने घर में अच्छा संग्रह बना लिया था जिसका अधिकांश भाग आज नष्ट हो चुका है, कुछ अंश बड़ौदा के हिन्दी विभाग तथा कुछ अंश भावनगर के एक चारण के यहां सुरक्षित है।

१- स्मरण पोथी, पृ०१४।

२- वही, पृ०१५-१६।

३- वही, पृ०१७।

४- वही, पृ०२०।

५- वही, पृ०२१।

गोविन्द गिल्लाभाई की यात्राओं के उक्त विवरण से उनकी भ्रमण वृत्ति तो स्पष्टत: सिद्ध होती ही है साथ ही उन यात्राओं का साहित्य शोध आदि से सदा सम्बन्ध होने के कारण, उन्हें साहित्य सेवा की भावना से अनुस्यूत कहा जा सकता है । अत: उपरोक्त अधिकांश यात्राओं को एक प्रकार से शोध प्रवास या साहित्यिक यात्राएं ही मानना अधिक उपयुक्त होगा । इन यात्राओं से इनको जो अनेकानेक प्रकार के खट्टे मीठे अनुभव हुए होंगे, उनका उल्लेख न मिलने के कारण निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता, परन्तु इतना निश्चित है कि इन यात्राओं से कवि को अनेक प्रकार के अनुभव तो हुए ही होंगे, साथ ही साहित्य आदि से सम्बद्ध जो सामग्री इन यात्राओं में प्राप्त हुई है, उसका विशेष मूल्य अवश्य विचारणीय है ।

७। आजीविका आदि

वंश परम्परा से गोविन्द गिल्लाभाई सिहोर (भाव नगर) के महाराजा के खवास थे । इनके पिता श्री गिल्लाभाई सिहोर के किले में चलने वाले अतिथि-गृह (रसोड़ा) के मुख्य व्यवस्थापक थे ।[१] और महाराज की खवासी भी करते थे । परन्तु गोविन्द गिल्लाभाई प्रारम्भ से ही काव्य रचना एवं ज्ञानार्जन की ओर विशेष रूप से प्रवृत्त होने के कारण कदाचित खवासी का काम नहीं करते थे, क्योंकि इन्होंने कहीं भी इस बात का इस प्रकार से उल्लेख नहीं किया है कि जिससे यह अनुमान किया जा सके कि इन्होंने अपना परंपरा प्राप्त काम किया था । अगर इन्होंने भावनगर के राज घराने में कभी खवासी का काम किया होता तो, जिस प्रकार इन्होंने अपने अन्य कामों तथा अर्थ प्राप्ति के स्रोतों का उल्लेख किया है, उसी प्रकार इस बात का भी उल्लेख अवश्य किया होता । आशय यह कि इस विषय में इनका पूर्ण मौन यही सिद्ध करता है कि इन्होंने अपनी प्रकृति अथवा किसी अन्य कारण से खवासी का काम नहीं किया ।

१- स्मरण पोथी, पृ० ३ ।

पं० अक्षयवट मिश्र ने गोविन्द गिल्लाभाई के जीवन चरित्र विषयक अपने लेख में लिखा है कि आजकल आप राजकोट के किंग कालेज में हैं।[1] यदि पं० अक्षयवट मिश्र का आशय इस कथन से यह है कि गोविन्द गिल्लाभाई राजकोट के किंग कालेज में नौकरी करते थे तो उन का यह कथन भ्रामक प्रतीत होता है। कारण गोविन्द गिल्लाभाई ने अपनी डायरी आदि में इस बात का उल्लेख नहीं किया, जबकि अन्य स्थानों पर उन्होंने जहां भी नौकरी की थी, उसका उल्लेख अवश्य किया है। अत: वास्तविकता यही प्रतीत होती है कि इन्होंने राजकोट के किंग कालेज में नौकरी नहीं की थी। हां, सं० १६६४ में वरल दरबार के कुमार श्री अजीतसिंह जी राजकोट के किंग कालेज में अध्ययनार्थ गये थे और गोविन्द गिल्लाभाई उनके साथ कुछ समय वहां रहे थे। गोविन्द गिल्लाभाई ने इस विषय में लिखा है कि "सं० १६६४ ना भाद्रवा सुद १ ने भाई श्री अजीतसिंह जी राजकोट किंग कालेज माँ भणवा पधार्या, ने भाद्रवा सुद २ ने दिने कालेज मां दाखल थया, त्यां मने राजकोट कालेज मां कुमार श्री पासे मुसाहेब नीम्यो ने राख्यो।"[2] (सं० १६६४ के भाद्रपद शुक्ला १ के दिन भाई श्री अजीत सिंह जी राजकोट किंग कालेज में पढ़ने पधारे और भाद्रपद शुक्ला २ के दिन कालेज में प्रविष्ट हुए, वहां मुझे राजकोट कालेज में कुमार श्री के पास मुसाहिब के रूप में नियुक्त किया और रखा।) गोविन्द गिल्लाभाई के इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि वे राजकोट में कुमार श्री अजीत सिंह जी के अभिभावक के रूप में ही रहते थे, किंग कालेज में प्राध्यापक या किसी अन्य रूप में नियुक्त नहीं थे।

गोविन्द गिल्लाभाई की आजीविका के विषय में मिश्रबंधु विनोद में लिखा है कि बहुत दिनों तक आप सरकारी नौकरी करते रहे और अब पेंशन पाते हैं।[3]

१- विहार बंधु (साप्ताहिक) बांकीपुर सं० १६६६ भाद्रपद १२(११-६-१८६६) भाग ३८ अंक ३६।

२- स्मरण पोथी, पृ० २०।

३- मिश्रबंधु विनोद, तीसरा भाग, पृ० १२५८(सं० २१७६)।

परन्तु अन्तर्साक्ष्य के आधार पर यह कथन सत्य प्रतीत नहीं होता । वैसे गोविन्द गिल्लाभाई ने समय समय पर भावनगर तथा सौराष्ट्र को अन्य रियासतों में कई पदों पर काम किया है, जिनका उल्लेख उनकी डायरी आदि में स्पष्टत: मिलता है, परन्तु बहुत समय तक उन्होंने कहीं टिक कर काम नहीं किया । अत: अन्तिम समय में कहीं से पेंशन मिलने की बात युक्ति युक्त प्रतीत नहीं होती । हां, वंश परम्परा से भावनगर रियासत के सेवक तो थे ही, अत: इसके कारण कुछ वार्षिक वृत्ति आदि मिलती रही हो तो बात और है, परन्तु ऐसी किसी बात का उल्लेख उनकी डायरी आदि में नहीं मिलता ।

गोविन्द गिल्लाभाई ने सर्वप्रथम बम्बई में सं० १९३४ के वैशाख मास में शाह भीमसिंह माणेक के ग्रंथ सागर नामक प्रेस में पुस्तक परिशोधक की नौकरी की थी परन्तु सात आठ मास नौकरी करके सं० १९३५ के पौष मास में अपने गांव सिहोर वापिस आ गये थे[१]। इसके पश्चात भावनगर के दरबारी जूना शोध खाता (राजकीय प्राचीन शोध विभाग) में सं० १९३७ से सं० १९३९ तक नौकरी की , और सं० १९३९ में ही इस नौकरी को छोड़ कर तुरन्त रावल श्री हरि सिंह जी के यहां नौकरी कर ली[२]। श्री हरिसिंह जी के यहां इन्होंने किस प्रकार की नौकरी तथा कितने समय तक की थी, निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता । परन्तु सं० १९५२ में वे श्री हरिसिंह जी कुंवरी की सगाई करने के लिए भरतपुर अवश्य गये थे[३]। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि इन्होंने हरिसिंह जी के यहां दीर्घ समय तक नौकरी की थी तथा उनकी कुंवरी की सगाई की बात पक्की करने जैसे महत्वपूर्ण काम भी वे करते थे । दीर्घ काल तक नौकरी करने के कारण इनका श्री हरिसिंह जी से सम्बन्ध पर्याप्त

१- स्मरण पोथी, पृ० ८ ।

२- वही, पृ० ९ ।

३- वही, पृ० १४ ।

घनिष्ठ हो गया था, जिसके कारण ही ये अपने ज्येष्ठ पुत्र जयसिंह को उनके साथ काशी तक भेज सके थे, जहां इन दोनों की मृत्यु विष से हो गयी[१]। हरिसिंह जी की मृत्यु के पश्चात भी उनके परिवार के साथ इनका वैसा ही घनिष्ठ संबंध बना रहा था। गोविन्द गिल्लाभाई हरिसिंह जी की मृत्यु के पश्चात उनकी रानियों को लेकर प्रभास पाटण आदि तीर्थ स्थानों की यात्रा कराने ले गये थे तथा उनके पुत्रों की शिक्षा आदि की व्यवस्था भी की थी[२]। इससे यही अनुमान किया जा सकता है कि इन्होंने श्री हरिसिंह जी के यहां काफी दिनों तक नौकरी की थी। श्री हरिसिंह जी के यहां सुदीर्घ समय तक नौकरी करने के कारण इन दोनों व्यक्तियों की प्रकृति - साम्य भी हो सकता है, क्योंकि दोनों ब्रजभाषा काव्य के अतिशय अनुरागी तथा कवि थे। वैसे नौकरी करने से पूर्व भी दोनों व्यक्ति एक दूसरे से अच्छी तरह परिचित थे। इस नौकरी काल में गोविन्द गिल्लाभाई ने एक मकान तथा कुछ जमीन आदि भी खरीदी थी[३], जिससे अनुमान किया जा सकता है कि इस नौकरी के समय में गोविन्द गिल्लाभाई को अच्छी अर्थ-प्राप्ति भी हुई होगी। परन्तु यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि श्री हरिसिंह जी की नौकरी इन्होंने सं० १९५७ से पूर्व ही किसी समय छोड़ दी होगी, क्योंकि सं० १९५७ में इन्होंने पालीताना के दीवान श्री गणपतराम जी के यहां नौकरी कर ली थी, जो एक वर्ष तक चलती रही थी[४]। इसके पश्चात इन्होंने फिर कहीं नौकरी की हो ऐसा उल्लेख नहीं मिलता।

नौकरी के अतिरिक्त गोविन्द गिल्लाभाई की जीविका का द्वितीय साधन इनका वरल, पालीताना, वढ़वाण, भावनगर आदि सौराष्ट्र की छोटी बड़ी

१- स्मरण पोथी, पृ० १५।

२- वही, पृ० १७।

३- वही, पृ० १५।

४- वही, पृ० १५।

रियासतों के साथ निकट सम्बन्ध था। जहां से इन्हें समय समय पर पुरस्कार आदि के रूप में अर्थ-प्राप्ति होती रहती थी।[1] इसके अतिरिक्त पुस्तकादि प्रकाशन तथा संपादन आदि से कुछ धन-प्राप्ति होती रहती थी, साथ ही इन्होंने कुछ ग्रंथों की टीका आदि लिख कर कुछ धन प्राप्त किया था, जैसे कि सं० १६५१ में शिवराज भूषण की टीका लिखी थी, जिसके बदले में इन्हें तीन सौ रुपये मिले थे।[2] स्वयं अपने ग्रंथों को प्रकाशित कर भी इन्होंने कुछ धन कमाया था।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि सं० १६३४ से सं० १६५८ तक गोविन्द गिल्लाभाई यत्र तत्र नौकरी ही करते रहे थे। परन्तु कहीं भी इन्होंने जम कर नौकरी नहीं की। इनकी आजीविका का दूसरा साधन सौराष्ट्र की रियासतों से इनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। अन्तिम साधन इनकी साहित्य सेवा ही कहा जा सकता है, जिससे यदा कदा कुछ पारिश्रमिक, पुरस्कार तथा पुस्तक विक्रय आदि से अर्थ लाभ होता रहता था।

३।८ इतर प्रवृत्तियां

गोविन्द गिल्लाभाई के केवल जन्म, मरण, पारिवारिक जीवन, भ्रमण, और आजीविका आदि के विषय में जानकारी प्राप्त कर लेने में ही उनके जीवन वृत्त की सम्पूर्णता नहीं मानी जा सकती। इन बातों के अतिरिक्त उनके जीवन वृत्त का वह अंश अभी अज्ञात ही रहता है, जिसका सम्बन्ध लोक जीवन तथा साहित्य से रहा है। यद्यपि गोविन्द गिल्लाभाई के जीवन वृत्त के उक्त अंश को हमने "इतर प्रवृत्तियां" कहा है परन्तु वास्तव में इनके जीवन का यह अंश ही ऐसा है, जिससे इनके चरित्र पर विशेष प्रकाश पड़ सकता है। अब तक इनके जीवन वृत्त के सामान्य तथा स्थूल पक्ष का ही परिचय प्राप्त किया है। अब इनके कवि जनोचित

१- स्मरण पोथी, पृ० ६, १४, १५, २०, २४।
२- वही, पृ० १५।

चरित्र का रूप उद्घाटित किया जा सकता है । गोविन्द गिल्लाभाई के जीवन वृत्त के इस पक्ष को हम लोक जीवन तथा साहित्यिक प्रवृत्तियों के रूप में समझ सकते हैं ।

३[८।१ लोक जीवन

सामान्यत: कवि हृदय अधिक संवेदनशील होने के कारण लोक सेवा और परोपकार की ओर सहज ही प्रवृत्त हो जाते हैं । गोविन्द गिल्लाभाई के जीवन का यह पक्ष आज भी उनके प्रदेश सिहोर के वृद्ध जनों द्वारा बार बार याद किया जाता है । सिहोर की यात्रा के प्रसंग में ऐसे कई वृद्ध जन मिले हैं, जिन्होंने उनके लोक-सेवा तथा परोपकार सम्बन्धी अनेक संस्मरण सुनाये हैं । इस प्रकार की एक घटना का उल्लेख इनकी डायरी बुक में भी प्राप्त हुआ है । सं० १९४७ में सिहोर के एक ठेकेदार श्रीराममाला ने गोधरा रतलाम रेल्वे लाइन पर एक ठेका लिया था । देवगढ़ बारिया राज्य के अन्तर्गत लीमखेड़ा नामक गांव में उसका काम चल रहा था । वहां अंग्रेजी में काम काज तथा पत्र व्यवहार आदि करने केलिए गोविन्द गिल्लाभाई के जेष्ठ पुत्र श्री जयसिंह को वह ठेकेदार अपने साथ ले गया था/एक बार वे अपने पुत्र से मिलने के लिए लीमखेड़ा गये थे/ उसी समय जबलपुर के एक मजदूर की मृत्यु हो जाने के कारण उसका केवट नाम का दस वर्ष का लड़का अनाथ रह गया । उसी समय कारखाने के टूट जाने से अन्य सभी मजदूर भाग गये और वह अनाथ लड़का वही रह गया । गोविन्द गिल्लाभाई को उस बालक की स्थिति पर बड़ी दया आयी और वे उसे अपने पुत्र के साथ अपने गांव सिहोर ले आये । तथा अपने परिवार में अपने बालकों की तरह उस बालक को रख लिया । सं० १९४८ में लगभग आठ दस मास तक उसे अपने परिवार में रख कर वे उस अनाथ बालक को लेकर बम्बई गये और बम्बई में जबलपुर के किसी व्यक्ति के साथ उस बालक को टिकिट आदि दिलवा कर जबलपुर रवाना कर दिया । जबलपुर में जब वह बालक अपनी मां को मिल गया, तब उसने किसी व्यक्ति द्वारा गोविन्द गिल्लाभाई को इस बात की सूचना भिजवा दी । उस बालक की सकुशल अपनी मां के पास पहुंच जाने की सूचना प्राप्त कर गोविन्द गिल्लाभाई को परम शान्ति का अनुभव हुआ ।[१] इस घटना के उल्लेख तथा सिहोर वासियों के संस्मरण

१- स्मरण पोथी, पृ० १२ ।

सुन कर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि गोविन्द गिल्लाभाई का हृदय परोपकार के लिए सदा तत्पर रहता था । सं० १९४१ से पूर्व सिहोर में अंग्रेजी पढ़ने पढ़ाने की कोई व्यवस्था नहीं थी । सिहोर के विद्यार्थी, जो अंग्रेजी पढ़ना चाहते थे, उन्हें सिहोर से कुछ मील दूर सोनगढ़ नामक स्थान पर जाना पड़ता था । सं० १९४१ में सोनगढ़ का स्कूल भी कुछ कारणों से बंद कर दिया गया । परिणाम स्वरूप सोनगढ़ के स्कूल के प्राध्यापकों को तो अपनी आजीविका से हाथ धोना ही पड़ा, साथ ही सिहोर सोनगढ़ तथा आसपास के स्थानों से पढ़ने आने वाले विद्यार्थी भी अंग्रेजी के ज्ञान से वंचित रहने लगे । इसलिए गोविन्द गिल्लाभाई ने इस समय सिहोर में ही एक अंग्रेजी पाठशाला की स्थापना कर डाली, जो गांव के अन्य लोगों के सहयोग के अभाव के कारण तीन चार साल काम कर बंद हो गयी ।[१] इसी प्रकार इन्होंने सन् १९०४ में भावनगर में गरासिया विद्या विनोद नामक स्कूल की स्थापना की, जिस के साथ एक छात्रावास की व्यवस्था भी की गयी थी। प्रारम्भ में इन्हीं को इस सबके व्यवस्थापक के रूप में काम करना पड़ा था ।[२]

गोविन्द गिल्लाभाई ने मोरवी दरबार के महाराज कुंवर श्री हरभमजी के प्राइवेट सेक्रेटरी श्री औंघड़ कान जी चौहान के साथ किसी समय एक खवास हितकारिणी सभा की स्थापना की थी, जिसके संविधान तथा अपील की एक हस्तलिखित तथा एक प्रकाशित प्रति इनके स्फुट कागज पत्रों में प्राप्त हुई है ।[३] अन्य किसी विशेष सूचना के अभाव में यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि इस सभा की स्थापना में गोविन्द गिल्लाभाई का क्या योगदान रहा तथा उसकी क्या कार्य प्रणाली आदि थी । परन्तु इतना निश्चित है कि स्वजातीय विकास की भावना से प्रेरित होकर यह सभा स्थापित की गयी थी ।

१- स्मरण पोथी, पृ० १० ।

२- वही, पृ० १७ ।

३- देखिए : स्फुट कागज - पत्र - बड़ौदा वि०वि० के हिंदी विभाग का संग्रह ।

श्री गोविन्द गिल्लाभाई के सामाजिक कार्यों से प्रभावित होकर तत्कालीन सिहोर नगरपालिका के अंग्रेज अध्यक्ष श्री सिम्स ने इन्हें सं० १६४६ (५-५-१८६०) में सिहोर नगरपालिका का सदस्य नियुक्त किया था[१]।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि गोविन्द गिल्लाभाई अपने सामाजिक कार्यों से सिहोर भावनगर तथा अन्य निकटवर्ती स्थानों पर अच्छी तरह जाने पहिचाने जाते थे। तथा यह उनकी प्रकृति में ही था कि अपने समाज की यथासम्भव सेवा की जाय। अत: वे सदा कुछ न कुछ सामाजिक लोक-सेवा-परक कार्य किया ही करते थे। सिहोर नगरपालिका के अंग्रेज अध्यक्ष श्री सिम्स ने उनकी सामाजिक सेवाओं से प्रभावित होकर सिहोर नगरपालिका का सदस्य इन्हें मनोनीत किया, जो उस समय एक बड़ी सामाजिक उपलब्धि मानी जाती थी। उनके समय के वृद्ध जन आज भी उन्हें अपने हृदय में बसाये हुए हैं।

३।८।२ साहित्यिक प्रवृत्तियां

साहित्य की सृजनात्मक सेवाएं, जो कुछ गोविन्द गिल्लाभाई ने की हैं, उनका अध्ययन तो आगे उनके साहित्यिक कृतित्व तथा कृतियों का अध्ययन करते समय किया ही जायेगा, क्योंकि वही आगे हमारे अध्ययन का प्रमुख विषय होगा। परन्तु यहां सृजनात्मक साहित्य की रचना के अतिरिक्त इनकी अन्य इतर साहित्यिक प्रवृत्तियों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त किया जा सकता है। क्योंकि साहित्य के विद्यार्थी के लिए कवि के जीवन का यह पक्ष भी अपने आप में महत्वपूर्ण होता है।

साहित्य सम्बन्धी प्रथम प्रवृत्ति, जिसका सम्बन्ध इनके साहित्य के परिचय काल से लेकर जीवन के अन्तिम समय तक रहता है, वह है, साहित्य का व्यापक अध्ययन तथा उसके प्राचीन, अर्वाचीन हस्तलिखित तथा प्रकाशित सभी प्रकार के ग्रंथों का संग्रह संचयन आदि।

१- स्मरण पोथी, पृ० ११।

गोविन्द गिल्लाभाई ने लिखा है कि "निरंतर बालपन से आज पर्यन्त काव्य के अभ्यास (अध्ययन) किया है और आज भी करते हैं, तथापि काव्य समुद्र को पार नहि पाये हैं ।[१]" इनकी शिक्षा आदि के विषय में विचार करते समय इसके बारे में विशेष रूप से लिखा जा चुका है । अत: यहां उसके विषय में पुन: कुछ भी नहीं कह कर इनकी अन्य साहित्यिक प्रवृत्तियों के विषय में ही यहां विचार किया जायेगा ।

गोविन्द गिल्लाभाई की द्वितीय महत्वपूर्ण साहित्यिक प्रवृत्ति साहित्य संग्रह कही जा सकती है । यह प्रवृत्ति मूलत: इनकी साहित्य सम्बन्धी जिज्ञासा के कारण विकसित हुई तथा उस समय प्रकाशित पुस्तकों के अभाव के कारण विशेष रूप से पल्लवित हुई । प्रारम्भ में इन्हें कुछ प्रकाशित तथा हस्तलिखित पुस्तकें पुरस्कार रूप में प्राप्त हो गयी थी ।[२] बाद में स्वयं अनेक स्थानों की यात्रा करके इन्होंने अनेक हस्तलिखित तथा प्रकाशित पुस्तकें प्राप्त की थीं ।[३] अनेक बार ऐसा भी होता था कि हस्तलिखित पुस्तकों का स्वामी अपनी पुस्तकों को बेचने को तैयार नहीं होता था/ ऐसी स्थिति में इन्होंने आवश्यक पुस्तकों की नकल करवा कर उन्हें अपने पास मंगवाया था ।[४] इस प्रकार गोविन्द गिल्ला भाई ने पुरस्कार रूप में प्राप्त कर, खरीद कर तथा नकल करवा कर अनेकानेक हिन्दी के अलभ्य प्रकाशित तथा हस्तलिखित ग्रंथों का सुन्दर संग्रह कर एक प्रामाणिक पुस्तकालय बना लिया था ।[५]

पुस्तक संग्रह (हस्तलिखित तथा प्रकाशित) आज भी श्रम-साध्य कार्य है, और उस समय तो यह और भी अधिक कठिन काम था । परंतु गोविन्द गिल्लाभाई कभी निराश नहीं हुऐ । अनेक बार अपने प्रत्यक्ष परिचय के न होने पर पुस्तक के मूल स्वामी के पास किसी उसके परिचित व्यक्ति से सिफारिशी पत्र आदि लिखवा

१- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात् , पृ० २१ ।

२- स्मरण पोथी, पृ० ५-६ ।

३- वही, पृ० ८ , १४ ।

४- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग), उपोद्घात्, पृ० २० ।

५- बिहा बंधु (साप्ताहिक),बाकीपुर, भाग० ३८, अंक ३६, दिनांक ११-६-१८९६ ।

कर भी अपना कार्य करवाना पड़ता था[१]। इस प्रकार सतत परिश्रम तथा लगन के परिणाम स्वरूप ये जो पुस्तकालय तैयार कर पाये थे आज अपनी सम्पूर्णता में यद्यपि उपलब्ध नहीं है, फिर भी उसकी जो सूची प्राप्त हुई है उससे उसकी समृद्धि का सहज ही अनुमान किया जा सकता है।

साहित्य के अध्ययन तथा संग्रह की सतत साधना ने गोविन्द गिल्लाभाई को अपने समय की प्राय: सभी प्रमुख साहित्यिक संस्थाओं (हिन्दी तथा गुजराती की) के अत्यधिक निकट ला दिया था। काशी कवि समाज, काशी कवि मंडल, पटना कवि समाज तथा काशी नागरीप्रचारिणी सभा आदि हिन्दी की साहित्यिक संस्थाओं तथा गुजराती साहित्य परिषद आदि गुजराती की साहित्यिक संस्थाओं के ये सक्रिय सभासद थे। काशी कवि समाज, काशी कवि मंडल तथा पटना कवि समाज आदि संस्थाओं से निरंतर काव्य-समस्याएं आया करती थी, जिनकी पूर्ति करके ये वहां भेजा करते थे।[२] उक्त संस्थाओं के समस्या पूर्ति संग्रहों में इनकी अनेक कविताएं प्रकाशित हुई हैं[३]। सं० १९५३ तदनुसार दिनांक ७-८-१८९६ में काशी कवि समाज की ओर से इनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए एक धन्यवादात्मक पत्र लिखा गया था तथा एक बार पांच रुपये और दूसरी बार बारह रुपये का पुरस्कार भी भेजा गया था[४]। इसी प्रकार काशी नागरीप्रचारिणी सभा की ओर से इनकी हिन्दी सेवाओं की प्रशंसा की गयी थी तथा सं० १९८१ के भाद्रपद मास में सभा की प्रबन्ध समिति ने इन्हें सभा का आनरेरी सभासद चुना था[५]। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि गोविन्द गिल्लाभाई अहिन्दी भाषी प्रदेश में दूर रहते हुए भी हिन्दी भाषी प्रदेश की सभी प्रमुख साहित्यिक संस्थाओं से न केवल परिचित थे वरन् उनसे निकट से सम्बन्धित थे।

१- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग), उपोद्घात्, पृ० २० ।

२- वही, पृ० ११ ।

३- स्मरण पोथी, पृ० ३४ ।

४- वही, पृ० ५६ ।

५- वही, पृ० ८३ ।

साहित्यिक संस्थाओं के अतिरिक्त गोविन्द गिल्लाभाई अपने समय के अनेक हिन्दी के साहित्यकार लेखकों से कवि, विद्वान्, शिक्षक आदि अनेक रूपों में परिचित थे । मिश्रबंधुविनोद के लेखन काल में इन्होंने मिश्र बंधुओं के पास सौराष्ट्र से हिन्दी कवियों के विषय में जो सामग्री भेजी थी उसके विषय में मिश्र बन्धुओं ने लिखा है कि "हमारे प्राचीन मित्र और हिन्दी जगत् के सुपरिचित स्वर्गीय कवि गोविन्द गिल्लाभाई ने काठियावाड़ से कवियों तथा गद्य लेखकों की विवेचना सहित एक वृहद् सूची भेजी, जिससे प्राय: ५०० अज्ञात लोगों का हमें पता चला"[१] । मथुरा के कविरत्न नवनीत चतुर्वेदी के पास से गोविन्द गिल्लाभाई ने ग्वाल, घनानन्द आदि अनेक प्राचीन कवियों के हस्तलिखित ग्रंथ मंगवा कर उनकी प्रतिलिपि की थी । इस प्रसंग में लिखे गये पत्र आदि को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि कविरत्न नवनीत चतुर्वेदी के साथ इनके घनिष्ट सम्बन्ध थे[२] । इसी प्रकार जोधपुर के मुंशी देवीप्रसाद डुमरांव के पं० अक्षयवट मिश्र, "विप्रचंद्र" कवि, डुमरांव के श्री नकछेदी तिवारी, "अजान" कवि आदि अनेक हिन्दी के साहित्यकारों से गोविन्द गिल्लाभाई का निकट सम्बन्ध था, जिनके साथ साहित्यिक विषयों को लेकर सदा पत्र व्यवहार बना रहता था । गुजरात के तत्कालीन अनेक हिन्दी कवि गोविन्द गिल्लाभाई के साथ निकट का सम्बन्ध बनाये रखते थे तथा आवश्यकतानुसार उनसे परामर्श किया करते थे । भुज की पाठशाला के प्रधानाचार्य श्री जीवराम अजरामर गौर तथा श्री हरिसिंह जी गोहिल आदि गुजरात के प्रमुख हिन्दी कवियों के साथ इनका मित्रता का सम्बन्ध था । सौराष्ट्र में इनकी ख्याति इतनी हो गयी थी कि साहित्य सम्बन्धी प्रश्नों पर परामर्श करने के लिए विद्वान् इनके पास आया करते थे । भुज के प्रसिद्ध कवि गोप (गोपाल जगदेव) इनको अपना गुरू मानते थे तथा अपना ग्रंथ रुक्मिणी हरण किंवा काव्य प्रभाकर संशोधनार्थ इनके पास भेजा था, जिसके अंत में इस बात का उल्लेख इस प्रकार किया गया है :

१- मिश्रबंधु विनोद (प्रथम भाग) भूमिका, पृ० ७ मिश्रबन्धु ।

२- प्रस्तुत लेखक कविरत्न नवनीत चतुर्वेदी का पौत्र है ।

"वासी पुरसिहोर के, गोविंद सुकवि सुजान ।
प्रेम सहित यह ग्रंथ सुन, कीनो शुद्ध विधान ।

इसके अतिरिक्त गोविन्द गिल्लाभाई का अनेक हिन्दी के कवियों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध था, जिन्होंने इनकी तथा इनकी कविता की प्रशंसा में समय समय पर कुछ छंद लिख कर इनके पास भेजे हैं।[1] जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि गोविन्द गिल्लाभाई का सम्बन्ध इन सभी व्यक्तियों से साहित्य के कारण ही था । गोविन्द गिल्लाभाई के साहित्यिक व्यक्तित्व के विकास में उनका उक्त व्यक्तियों से सम्बन्ध सहायक तो सिद्ध हुआ ही, साथ ही उनकी साहित्यिक सेवाओं में भी उपकारक सिद्ध हुआ है ।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि गोविन्द गिल्लाभाई का सम्पूर्ण जीवन हिन्दी साहित्य की सेवा में ही व्यतीत हुआ है । उन्होंने अनेक हिन्दी ग्रंथों की गुजराती टीका कर गुजराती भाषियों के लिए हिन्दी और भी सुगम बना दी तथा हिन्दी के अनेक ग्रंथों का संग्रह कर हिन्दी की प्राचीन परम्परा के संरक्षण का महत्वपूर्ण कार्य किया है । गोविन्द गिल्लाभाई ने हिन्दी ग्रंथों का अनुवाद, संपादन समीक्षा आदि जो कार्य किया है उसका आगे विवेचन किया जायेगा । यहां केवल इतना ही ज्ञातव्य है कि मूलत: कवि होते हुए भी इन्होंने हिन्दी साहित्य से सम्बन्धित और भी अनेक कार्य किए हैं, जिनसे इनका समूचा जीवन पूर्णत: व्याप्त था । आशय यह कि गोविन्द गिल्लाभाई का समूचा जीवन हिन्दी के लिए ही समर्पित था । स्वाध्याय, सृजन, समीक्षा, संग्रह और शोध के साथ साथ टीका, अनुवाद तथा संपादन एवं प्रकाशन आदि अनेक रूपों में इन्होंने सामान्य साहित्य की सामान्यत: तथा हिन्दी साहित्य की विशेषत: सेवा की है । श्रीयुत शुकदेव बिहारी मिश्र ने इनकी गोविन्द ग्रंथमाला प्रथम भाग के विषय में लिखते हुए कहा है कि "ये महाशय हिन्दी के एक परम प्रसिद्ध प्राचीन लेखक तथा सुकवि हैं/ यावज्जीवन इन्होंने हिन्दी के हित में प्रयत्न किया है, और वह श्रम सब प्रकार से प्रशंसनीय है ।[2]

१- देखिए : परिशिष्ट - सप्तम् ।

२- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) अभिप्राय, पृ० २७ ।

श्री अक्षयवट मिश्र विप्रचंद्र कवि ने लिखा है आपके सब ग्रंथ हिन्दी भाषा भाषी समस्त जनों के अभिवंद्य, पूज्य और आदरणीय हैं[1]। यही बात यदि गोविन्द गिल्लाभाई के समग्र कृतित्व के विषय में कही जाय तो अत्युक्ति न होगी। क्योंकि जीवन पर्यन्त इन्होंने जिस परिश्रम तथा लगन के साथ हिन्दी की सेवा की है, वह वस्तुत: स्तुत्य है।

४। व्यक्तित्व

आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार व्यक्तित्व व्यक्ति की सम्पूर्णता का ही पर्याय कहा जा सकता है। आशय यह कि किसी व्यक्ति की प्राकृतिक तथा अर्जित दोनों प्रकार की विशेषताएं व्यक्तित्व के अंतर्गत स्वीकृत की जाती हैं[2]। व्यक्तित्व को शारीरिक, बौद्धिक तथा मानसिक विकास की श्रेणियों में विभक्त करके भी समझा जा सकता है। सामान्यत: जिसे चरित्र कहा जाता है वह वस्तुत: व्यक्तित्व का अभिव्यक्त रूप ही होता है। अत: व्यक्तित्व के अध्ययन में चरित्र का स्वरूप स्वयं स्पष्ट हो जाता है। सम्प्रति, गोविन्द गिल्लाभाई के जीवन वृत्त के विहंगावलोकन के पश्चात उनके व्यक्तित्व का संक्षिप्त परिचय प्राप्त किया जा सकता है, जिससे उनके चरित्र पर भी प्रकाश पड़ जायेगा।

गोविन्द गिल्लाभाई के व्यक्तित्व के शारीरि पक्ष के विषय में यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि वह अत्यधिक समृद्ध तथा प्रभावशाली था। बाल्यकाल से वृद्धावस्था तक किसी विशेष अस्वस्थता के अभाव के कारण उनका शरीर पर्याप्त हृष्ट पुष्ट तथा किसी प्रकार के दुर्व्यसन के न होने के कारण भी शरीर सम्पत्ति काफी अच्छी थी[3]। उनकी स्मरण पोथी तथा डायरी आदि में कहीं भी किसी प्रकार की शारीरिक पीड़ा या अस्वस्थता का उल्लेख नहीं मिलता। उन्होंने अपने पौत्र राजमी की अस्वस्थता का उल्लेख तो एक स्थान पर किया है, साथ ही पौत्र

१- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग), पृ० २४।

२- Introduction to General Psychology -Eston Jackson, p.456.

३- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात्, पृ० २१।

बधु की आंख से मोतिया निकलवाने का भी उल्लेख किया है।[१] परन्तु अपनी हर छोटी छोटी बात के उल्लेखों के साथ किसी बिमारी आदि के उल्लेख का अभाव यही सिद्ध करता है कि वे सदा निरोगी रहे थे। सं० १९७४ में सिहोर में प्लेग की बीमारी फूट निकली थी, जिसके कारण उनको परिवार सहित कुछ समय के लिए सिहोर छोड़ कर वरल जाना पड़ा था।[२] आशय यह कि स्मरण पोथी में गोविन्द गिल्ला भाई ने इन सब बातों का उल्लेख किया है परन्तु कहीं अपनी किसी बीमारी का उल्लेख नहीं किया है जिससे यही सिद्ध होता है कि इन्हें कभी किसी प्रकार की शारीरिक पीड़ा अथवा अस्वस्थता का अनुभव नहीं करना पड़ा था। परिणाम स्वरूप अन्तिम समय तक शरीर से पूर्णत: स्वस्थ रहे थे। एक स्थान पर उन्होंने इस बात की पुष्टि भी की है। उन्होंने लिखा है कि "अभी विक्रम संवत् १९६७ का चलता है और हमारा जन्म विक्रम संवत् १९०५ में होने से हमको (६२) बासठ वर्ष भये है, परन्तु कोइ जात का दुरव्यसन नहि होने से शरीर संपति अच्छी रही है।[३]" इसी समय उनका एक फोटो भी इस बात का साक्षी है, जो प्रस्तुत प्रबन्ध के मुखपृष्ट पर संलग्न है।

गोविन्द गिल्लाभाई द्वारा लिखित उनकी डायरी, साहित्य तथा उनके जीवन वृत्त के अध्ययन के आधार पर उनकी अनेक मानसिक वृत्तियों के विषय में अनेक प्रकार के अनुमान ही किए जा सकते हैं। आशय यह कि इनके आन्तर व्यक्तित्व अथवा मानसिक वृत्ति आदि के लिए उपलब्ध सामग्री पर्याप्त नहीं कही जा सकती क्योंकि उपलब्ध सामग्री में कवि द्वारा अपने विषय में तथ्य कथन (Statement of facts) ही अधिक हुआ है। कवि द्वारा न तो उन तथ्यों की व्याख्या ही मिलती है और न ही मानसिक वृत्तियों की उद्घाटक भाव परक उक्तियां ही उपलब्ध होती हैं। निस्संग, भावुकता शून्य, वस्तु परक कथन शैली के कारण उपलब्ध

१- स्मरण पोथी, पृ० २३।

२- वही, पृ० २५।

३- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात्, पृ० २१।

सामग्री के आधार पर केवल इनके व्यक्तित्व के मानसिक पक्ष के विषय में अनुमान ही किया जा सकता है, साथ ही उक्त कथन शैली में प्रारम्भ से अन्त तक सर्वत्र ऐसी एकरूपता मिलती है कि जिसके कारण इनके व्यक्तित्व के विकास का अध्ययन नहीं किया जा सकता । अत: इनके व्यक्तित्व के स्वरूप के विषय में कुछ अनुमान ही किये जा सकते हैं ।

उपलब्ध सामग्री के अध्ययन से जो तथ्य हमारे सम्मुख आते हैं, उनमें सर्वाधिक प्रमुख तथ्य है कवि की स्वात्म विषयक जागरूकता । आशय यह कि वे अपने विषय में इतने अधिक सचेत तथा जागरूक थे कि उन्होंने अपने से सम्बन्धित सभी मुख्य सामान्य तथ्यों का उल्लेख पूरे विस्तार के साथ कर दिया है । कदाचित सभी प्राचीन कवियों की तुलना में इन्होंने अपने विषय में सर्वाधिक लिखा है । गोविन्द ग्रंथमाला में अपना परिचय लिखने से पूर्व इसके कारण को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "हमारा परिचय कवि श्रेणी में देना उचित है या अनुचित है यह विषे हम कुछ नहि कह सके शकते, वह काव्य मर्मज्ञ की इच्छा पर रखते हैं । परंतु गोविन्द नाम के बहुत से कवि हो गये हैं, उनमें यह ग्रंथो के कर्ता कौन है यह जताने के लिए कुछ परिचय की जरूर जानकें थोडा सा हाल नीचे लिखते हैं ।[1] "इस कथन से स्पष्टत: अनुमान किया जा सकता है कि प्राचीन कवियों के विषय में उन्होंने जो शोध कार्य किया था, उसमें उन्हें अवश्य ही यह अनुभव हुआ होगा कि अपने विषय में कवि का एकान्त मौन भावी शोध छात्र, अथवा साहित्य के विद्यार्थी के लिए बड़ी समस्या बन जाता है तथा अनेक प्रकार के विवादों को जन्म देता है । कदाचित् इसीलिए उन्होंने अपने विषय में किसी तथ्य को अनुल्लिखित नहीं छोड़ा । उपलब्ध सामग्री में इनका संक्षिप्त आत्म परिचय दो बार लिखा मिलता है,[2] एक गुजराती में है और दूसरा हिन्दी में । इसके अतिरिक्त[3] एक "गोविन्द गिल्लाभाई ना जीवन चरित्र नी स्मरण पोथी अथवा डायरी" बुक "(गोविन्द गिल्लाभाई के जीवन चरित्र की

१- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात्, पृ० १६-१७ ।

२- देखिए स्फुट कागज पत्र ह० प्र० सं० २०६ ।

३- वही ।

स्मरण पोथी अथवा डायरी बुक नाम से व्यौरे वार जीवन[1] की सभी प्रमुख घटनाओं का वर्णन मिलता है तथा अन्य जो दो छोटी डायरी मिली हैं उनमें भी अपने तथा अपने साहित्य के विषय में बहुत कुछ लिखा गया है ।

इस प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि गोविन्द गिल्लाभाई ने अपना आत्म परिचय तथा जीवन चरित्र की स्मरण पोथी तृतीय पुरुष में ही लिखी हैं । जिस प्रकार अन्य कवियों के विषय में इन्होंने तृतीय पुरुष में सभी कुछ वस्तु परक शैली में ही लिखा है उसी प्रकार अपने विषय में भावुकता शून्य वस्तु परक शैली में ही लिखा है । छंदों में आये हुए अपने कवि नाम का वैज्ञानिक विवेचन यहां द्रष्टव्य है, "हमारा शुद्ध नाम गोविन्द है वह तगन होने से कवित्त मनहर और घनाक्षरी छंद की गति बिगाड़ देता है । इसलिये उनको भगन करके पढना चाहिये । जैसे कि- गोविन्द के बदले गोविंद पढ़ने से छन्दों की गति नहिं बिगडती है । इसलिये ऐसे लिखा गया है उनको सब यह भुजब भगन करके पढोगे ।[2]" उक्त कथन जैसी वस्तु परकता केवल तथ्योल्लेख तक ही सीमित है । यदि तथ्यों की व्याख्या कहीं कहीं की है तो वह भी वैज्ञानिक अथवा शास्त्रीय कारणों से उन्हीं के आधार पर की गयी है तथा भावुकता का सर्वत्र अभाव है, जिससे दो बातें सहज ही स्पष्ट हो जाती हैं कि - (१) वस्तु परक वैज्ञानिक वृत्ति (२) स्वात्म केन्द्रस्थता अथवा अपने विषय में अत्यधिक सचेतता । परन्तु इस स्वात्म केन्द्रस्थता का अर्थ विनय शून्यता नहीं लेना चाहिए/भारतीय संस्कृति की परंपरा प्राप्त विनयशीलता इनकी निम्नलिखित पंक्तियों में देखी जा सकती है - "विद्वान् वृन्द को हम प्रार्थना करते हैं कि यह हमारा पहिला परिश्रम है और स्वभाषा गूजराती होने सें शुद्ध हिन्दी भाषा होना असंभव है, तथापि भाषा में रचने का साहस किया है, इसलिये वामें भूल होय सो सुधार लेने की कृपा कीजियेगा ।[3]" - - - " परंतु आजकल के हमारे जैसे

१- देखिए स्फुट कागज पत्र ह० प्र० सं० २०६।

२- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात्, पृ० १६ ।

३- वही, पृ० १६ ।

अधम कवियों हल्दी के टुकड़े से पसारी बन बैठने की नाई प्राचीन कविन को समान कवि होने का दावा करता है, वह सब उपहास के पात्र होते हैं ।[१]

गोविन्द गिल्लाभाई की उक्त वस्तुपरक वैज्ञानिक वृत्ति का आधार उनकी शान्ति-भावुक प्रकृति प्रतीत होता है । जैसे इनकी कविता शास्त्र के शासन की पूर्ण अनुगामिनी है उसी प्रकार इनका कवि हृदय भी शास्त्र-पंडित के अनुशासन से कदापि मुक्त नहीं है । भावुकता के कारण जहाँ एक ओर इनके काव्य शिल्प में संयम है तथा रचनाओं में ढीलापन नहीं मिलता, वहीं दूसरी ओर इनका कवि हृदय अत्यन्त संकुचित हो गया है । आगे इनके कवित्व का अध्ययन करते समय यह बात और भी स्पष्ट हो जायेगी, परन्तु यहां इतना अवश्य जान लिया जा सकता है कि भावुकता के अतिरेक के अभाव के कारण एक ओर शास्त्र संयम युक्त विशुद्ध वस्तु परक दृष्टि सम्पन्न आचार्य इनके व्यक्तित्व में विकसित होता है, तथा दूसरी ओर इनके कवि की दृष्टि अत्यन्त संकुचित हो जाती है । परिणामस्वरूप प्रकृति प्रेम तथा प्रकृति चित्रण, जीवन की भावुकता पूर्ण स्थितियों का चित्रण अथवा सामान्य भाव-शिल्प, जीवन की गहन अनुभूतियों का चित्रण आदि इनकी कविता में दृष्टिगोचर नहीं होता । आशय यह कि इनके व्यक्तित्व की उक्त विशेषताओं के कारण तथा इनकी कविता रीति ग्रंथों की सामान्य विषय तथा विन्यास की सीमाओं में पूर्णत: आबद्ध होने के कारण अत्यधिक सामान्य है तथा रस की अपेक्षा चमत्कार प्रधान है ।

गोविन्द गिल्लाभाई के व्यक्तित्व की वस्तुपरक वैज्ञानिक वृत्ति का प्रमाण तथा परिणाम इनके शास्त्रीय साहित्य में प्राप्त विश्लेषणात्मकता कही जा सकती है । आशय यह कि वस्तुपरक वैज्ञानिक वृत्ति के कारण ही इनके शास्त्रीय संग्रह तथा शोध सम्बन्धी सामग्री में विश्लेषणात्मक विवेचन मिलता है जो अपने आप में इनके व्यक्तित्व की उक्त वृत्ति का प्रमाण भी है । इन्होंने जो कुछ काव्य अथवा काव्य ग्रंथ आदि संग्रहीत किये थे उनका विश्लेषण तथा वर्गीकरण भी इनके लिखे हुए हस्तलिखित ग्रंथों[१] में देखा जा सकता है । प्राचीन कवियों तथा प्राचीन हस्तलिखित

१- देखिए : स्फुट कागज पत्र ह० पृ० सं० २०६ ।

ग्रंथों की सूची आदि इनके स्फुट कागजपत्रों में प्राप्त हुई है,[1] इसी प्रकार इनकी छोटी डायरियों[2] में विविध शास्त्रों तथा उनके संस्कृत, हिंदी ग्रंथों की सूची मिलती है, जिन्हें इन्होंने अकारादि क्रम में लिखा है। गोविन्द हजारा तथा नीति विनोद[3] की हस्तलिखित प्रतियों के प्रारंभ में उनमें संगृहीत कवि तथा उनकी कविताओं का विश्लेषणात्मक विवरण मिलता है,[4] तथा प्रत्येक पूर्ण हस्तलिखित प्रतियों के प्रारंभ में विषय सूची तथा पृष्ट निर्देश किया गया है। इसी प्रसंग में गोविंद गिल्लाभाई की संयोजन वृत्ति तथा व्यवस्थावृत्ति का भी उल्लेख किया जा सकता है, जो इनके समस्त हस्तलिखित ग्रंथों में देखी जा सकती है। इन्होंने जिन अपने ग्रंथों का प्रकाशन किया था, उनके प्रकाशन व्यय का पूरा हिसाब दिया है,[5] इसी प्रकार इन्होंने सरदार आदि कुछ कवियों के ग्रंथों के प्रकाशन की योजना बनाई थी जिनकी छपाई आदि के खर्च आदि के उल्लेखों के साथ साथ उनके लिए आवश्यक कागजों तथा संभाव्य फार्मों तक का क्रमबद्ध विवरण प्राप्त होता है।[6] आशय यह कि वस्तुपरक वैज्ञानिक वृत्ति के कारण गोविन्द गिल्लाभाई का व्यक्तित्व कवि की अपेक्षा आचार्य रूप में अधिक प्रबल है एवं अधिक सफल भी।

गोविन्द गिल्लाभाई के व्यक्तित्व की उक्त विशेषताओं के अतिरिक्त उनकी परोपकार वृत्ति तथा सेवा भाव भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिनके प्रमाण जीवन वृत्त की चर्चा करते समय इतर प्रवृत्तियों के अंतर्गत प्रस्तुत किये जा चुके हैं।

गोविंद गिल्लाभाई अपने प्रत्येक कार्य में सदा निष्ठावान् रहे हैं। अपनी अज्ञता को छिपाने का प्रयास इन्होंने कभी नहीं किया। प्राचीन कवियों के विषय में लिखते समय जहां इन्हें जितना ज्ञात था उतना ही लिखा है। कल्पना के आधार पर

१- देखिए : स्फुट कागज पत्र ह०प्र०सं० २०६।

२- देखिए : लघु डायरियां, ह०लि०ग्रं० सं० १७५।

३- ,, : गोविन्द हजारा ह०प्र०सं० २०३। नीति विनोद, ह०प्र०सं० २०७।

४- गोविन्द हजारा, पृ०१-११। नीति विनोद, पृ०१-६।

५- स्मरण पोथी, पृ०१६।

६- लघु डायरी, पृ०२०।

अधिक लिखने का प्रयास नहीं किया । जिस कवि के विषय में इन्हें कुछ भी ज्ञात नहीं था, उसके विषय में स्पष्ट लिख दिया है कि इनके विषय में हमें कुछ भी ज्ञात नहीं है[१] । इसी प्रकार अपनी कविताओं जो प्राचीन संस्कृत अथवा हिन्दी कविताओं पर आधारित हैं, के विषय में इन्होंने स्पष्ट लिख दिया है कि "यह पुस्तक में जितनी कविता है, उनमें से कितनीक संस्कृत श्लोकों पर बनाई गई हैं और कितनीक स्वकल्पित है तथा कितनीक आधा भाषान्तर और आधी स्वकल्पित एसी मिश्र रचना संयुक्त है ।[२]" इन्हें जो कुछ शोध सामग्री जिस किसी स्थान तथा व्यक्ति से प्राप्त हुई थी, उसका स्पष्ट उल्लेख अवश्य किया गया है । हस्तलिखित ग्रंथों की प्राप्ति का स्थान तथा जिन हस्तलिखित प्रतियों से इन्होंने प्रतिलिपि की है, उनके नाम आदि का उल्लेख भी अवश्य किया है । इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि गोविन्द गिल्लाभाई ने सदा सत्य के निकट बने रहने का प्रयास किया है तथा कवि जन सुलभ अतिशयोक्तियों तथा कल्पनावृत्त सत्योल्लेखों से अपने आपको सदा दूर रखा है । यही इनकी सत्य निष्ठा का सबसे प्रबल प्रमाण है ।

वस्तुपरक वैज्ञानिक दृष्टि अथवा वस्तुस्थिति का यथावत् उल्लेख कर्ता के व्यक्तित्व के असृजनात्मक होने का प्रमाण माना जा सकता है । परन्तु गोविन्द गिल्लाभाई का व्यक्तित्व पूर्णत: असृजनात्मक तो नहीं कहा जा सकता, परन्तु मौलिकता का अधिकांश अभाव इनकी कविता का अध्ययन भी सिद्ध करता है । आशय यह कि गोविन्द गिल्लाभाई भाव या विचार के सृजन या भाव और विचार को नवीन रूप प्रदान करने में मौलिक नहीं हैं, परन्तु उनकी व्यवस्था, विश्लेषण तथा वर्गीकरण और तथ्य-शोध में मौलिक अवश्य हैं। अत: यह कहा जा सकता है कि इनकी मौलिकता कल्पना-परक न होकर वस्तुपरक अधिक है, जिसे कल्पना निष्ठ के विपरीत वस्तु निष्ठ भी कहा जा सकता है । जीवन के प्रति गोविन्द गिल्लाभाई

१- देखिए : स्फुट कागज पत्र (कवि चरित्र) ह० प्र० सं० २०६ ।

२- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग) उपोद्घात, पृ० ६ ।

की क्या दृष्टि थी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता । क्योंकि इनका उपलब्ध समुचा साहित्य दार्शनिक विचारधाराओं की उलझनों से सर्वथा मुक्त है । यद्यपि इन्होंने वज्र सूचिकोपनिषद् का अनुवाद किया था[१], तथा पौराणिक साहित्य में भी इनकी गति थी, परन्तु १९ वीं शताब्दी की सामान्य हिन्दू जीवन दृष्टि से भिन्न इनकी कोई विशेष जीवन दृष्टि नहीं कही जा सकती । धार्मिक मान्यताओं के विषय में इनकी सम्प्रदाय निरपेक्ष उदार दृष्टि इनके परब्रह्म पच्चीसी, विष्णु विनय पच्चीसी तथा अन्य ग्रंथों के मंगलाचरणों के अध्ययन से स्पष्ट हो जाती है ।[२] ब्रह्मा, विष्णु, राम, कृष्ण, महेश, कार्तिकेय, गणेश, हनुमान, पार्वती, राधा, कामदेव आदि सभी प्रमुख देवी-देवताओं की समान प्रार्थना इनके सभी देवों के प्रति सम भाव को स्पष्टत: सिद्ध करती हैं[३] । राधा कृष्ण के विषय में इन्होंने विशेष रूप से अवश्य लिखा है परन्तु उससे यह सिद्ध नहीं होता कि ये राधा कृष्ण के विशेष भक्त थे । रीतिकालीन कवियों के समान राधा कृष्ण इनके लिए भी शृंगार के सामान्य आलंबन मात्र ही थे ।

१९ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में यद्यपि हिन्दी और गुजराती साहित्य में सामाजिक एवं राष्ट्रीय भावनाओं का अवतार हो चुका था[४], तथापि हिन्दी साहित्य रीतिकालीन परंपरा से अपने आपको पूर्णत: मुक्त नहीं कर पाया था[५] । गोविन्द गिल्लाभाई इस काल के उन कवियों में से थे, जिन पर नवीन युग का प्रभाव अधिक नहीं पड़ा था । आशय यह कि ये परंपरा के प्रति अधिक आस्थावान होने के कारण अपने युग की नवीन चेतना के प्रति मुख्यत: उदासीन रहे हैं । शास्त्रीय विवेचन में तुलनात्मक तथा ऐतिहासिक दृष्टि इनकी नवीन युग के अनुरूप कही जा सकती है, परंतु प्रधानत: इन्हें रीतिकालीन कवि ही कहा जा सकता है ।

१- स्मरण पोथी, पृ० ३१ ।

२- गोविन्द ग्रंथमाला (प्रथम भाग), पृ० १-४६ ।

३- वही, पृ० १-२२ ।

४- हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० ५६३ ।

५- वही, पृ० ५५३-५४ ।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि गोविन्द गिल्लाभाई का व्यक्तित्व पूर्णत: तो नहीं परन्तु मुख्यत: परम्परावादी था ।

उपसंहार

हिन्दी साहित्य में प्रधानत: अभी तक हिन्दी भाषी प्रदेश के प्रमुख कवियों का ही अध्ययन हुआ है । प्रस्तुत अध्ययन में न केवल अहिन्दी भाषी प्रदेश के एक कवि का विशेष अध्ययन किया जा रहा है, वरन् एक सामान्य कवि का भी अध्ययन किया जा रहा है । प्रस्तुत अध्याय में उपलब्ध समस्त सामग्री के आधार पर गोविन्द गिल्लाभाई के जीवन वृत्त तथा व्यक्तित्व को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है जिससे उनके कृतित्व का आगे सम्यक् व्याख्या की जा सके ।